द्विमासिक
वर्ष : १ अंक : ५
मार्च-अप्रैल १९९२

# ऋषि प्रसाद

सिंहस्थ कुंभ विशेषांक

सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है ।

सिंहस्थ कुंभ पर्व
उज्जैन
१७ अप्रैल से १६ मई '९२
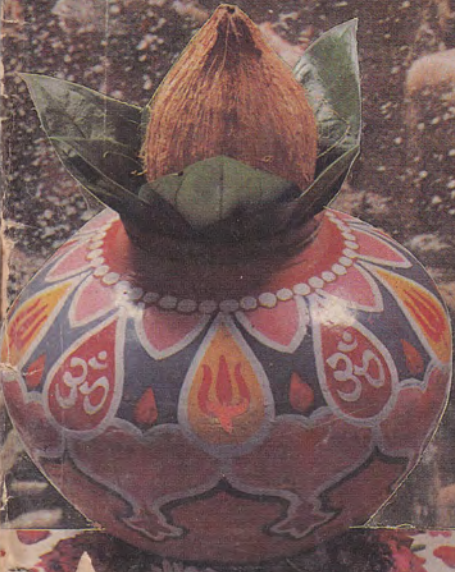
पूज्यपाद संत श्री
आसारामजी बापू उज्जैन में

**सदैव प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है।**

वर्ष : १

अंक : ५

मार्च - अप्रैल १९९२

तंत्री : के. आर. पटेल

| | |
|---|---|
| शुल्क वार्षिक | : रु. २२ |
| त्रिवार्षिक | : रु. ६० |
| विदेश में वार्षिक | : US $ २२ (डालर) |
| त्रिवार्षिक | : US $ ६० (डालर) |

* कार्यालय *

'ऋषि प्रसाद'

श्री योग वेदान्त सेवा समिति

संत श्री आसारामजी आश्रम

साबरमती, अहमदाबाद-३८० ००५.

फोन : ४८६३१०, ४८६७०२

**विदेश में शुल्क भरने का पता :**

International Yoga Vedanta Seva Samiti
8, Willams Crest,
Park Ridge, N.J. 07656 U.S.A.
Phone : (201) - 930 - 9195

टाईपसेटींग : फोटोटेक्स्ट, अहमदाबाद।

प्रकाशक तथा मुद्रक : श्री के. आर. पटेल, श्री योग वेदान्त सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, मोटेरा, अहमदाबाद-३८० ००५ ने अंकुर ऑफसेट, गोमतीपुर, अहमदाबाद में छापकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

## अनुक्रम



**'ऋषि प्रसाद' हर दो महीने में ९ वीं दिनांक को प्रकाशित होता है।**

केवल भारत का ही नहीं, सारे विश्व का अगर कोई सबसे बड़ा धार्मिक सम्मेलन, मेला हो तो वह कुम्भमेला है। विश्व की अन्य संस्कृतियाँ लुप्तप्रायः हो गई हैं जबकि एकमात्र भारत की सनातन संस्कृति ही अभी तक अपनी अस्मिता धाराप्रवाहरूप बनाये हुए है। भारतीय संस्कृति का दर्शन कुम्भमेले जैसे अवसरों पर होता है।

खगोलिक दृष्टि से सिंहराशि के गुरु में मेष का सूर्य आने से उज्जैन में सिंहस्थ पर्व मनाया जाता है। इस पर्व में अखिल भारत साधु-समाज, विविध सामाजिक, धार्मिक संस्थाएँ एवं प्रशासन भी अपनी पूरी व्यवस्था के साथ शरीक होता है।

इस बार के सिंहस्थ पर्व पर संत श्री आसारामजी आश्रम का भी सिंहस्थ शिविर आरम्भ से आखिर तक रहेगा। 'ऋषि प्रसाद' के इस अंक में हमने आपको सिंहस्थ पर्व की पौराणिक, भौगोलिक, सामाजिक एवं धार्मिक महत्ता और भगवान महाकाल की नगरी उज्जयिनी के संबंध में जानकारी के साथ परम पूजनीय संत शिरोमणी श्री आसारामजी बापू की संक्षिप्त जीवन-झाँकी, आश्रम की बहुविध प्रवृत्तियाँ, कुम्भ में श्रेष्ठ नियम (श्री हनुमान प्रसादजी पोद्दार के लेख से), हरिनाम कीर्तन की महिमा तथा 'तीर्थ किनके चरणों में लोटते हैं,' 'कबीरजी की गुरुदीक्षा' और 'साधनसिद्धि का रहस्य' आदि रसमय सामग्री देकर इस अंक को समृद्ध बनाने का प्रयास किया है। धारावाहिक चित्रकथा 'योगलीला' एवं 'शरीर स्वास्थ्य' हम स्थानाभाव के कारण यहाँ नहीं दे रहे हैं, अगले अंक से फिर से शुरु होगा।

*

## सत्गुरु का प्यार लिख दे

लिखनेवाले तू हो के दयाल लिख दे,<br>
मेरे हृदय अन्दर सत्गुरु का प्यार लिख दे।<br>
माथे पे लिख दे ज्योति गुराँ की,<br>
नयनों में उनका दीदार लिख दे ॥ मेरे० ॥<br>
जिभ्या पे लिख दे नाम गुरु का,<br>
कानों में शब्द झंक्कार लिख दे ॥ मेरे० ॥<br>
हाथों पे लिख दे सेवा गुरु की,<br>
तन मन धन उनपे वार लिख दे ॥ मेरे० ॥<br>
पैरों पे लिख दे जाना गुरु के द्वार,<br>
सारा ही जीवन उनके साथ लिख दे ॥ मेरे० ॥<br>
इक मत लिखना गुरु का बिछड़ना,<br>
चाहे तू सारा संसार लिख दे ॥ मेरे० ॥

*

**मर्ता अमर्तस्य ते भूरि नाम मनामहे।**

*'हे प्रभो ! हम मरनेवाले मनुष्यलोग अमर आपके नाम का कीर्तन करते हैं।'*

(ऋ : २२.५)

मरनेवाले मनुष्य शरीर के प्रस्थान की कोई निश्चित घड़ी, क्षण नहीं है। उसके समुद्धार के लिए कलियुग में भगवन्नाम ही एक मात्र उत्तम आधार है।

**'नाम सप्रेम जपत अनयासा।'** यह सप्रेम नामजप इस कलियुग में अनायास साधन है। इसकी साधना में कोई विशेष आडंबर, बाह्याचार या साधनों की आवश्यकता नहीं है। यह ऐसा रस है कि जितना चखो उतना ही मीठा लगता है। यह नाम-प्रेम ऐसा है कि पीने से तृप्ति नहीं होती, प्यास और बढ़ती है। पीने से आनंद होता है, प्यास भी बढ़ती है और अधिकाधिक पीने की लालसा उत्कट होती जाती है। ऐसा कौन पुण्यात्मा बुद्धिमान होगा जो ऐसे द्विगुण नामरस को छोड़कर संसार के रस जो कि इसकी तुलना में सदैव फीके हैं एवं उनके चखने से ही शक्ति का क्षय, रोग, पराधीनता और जड़ता अवश्यंभावी है, ऐसे नश्वर भोगसुख में लपटायेगा?

भगवन्नाम कीर्तन भगवान को भक्त के आधीन कर देता है। भगवान कहते हैं कि 'त्रिभुवन की लक्ष्मी, भोग, मान, यश आदि सुखों को नीरस गिननेवाले जो भक्त मेरा कीर्तन करते हुए मेरे आगे नृत्य करते हैं उनके द्वारा मैं खरीदा गया हूँ।'

भगवान देवर्षि नारदजी से कहते हैं :

**नाहं वसामि वैकुण्ठे योगीनां हृदये न वै।**
**मद्भक्ताः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥**

'हे नारद ! मैं कभी वैकुण्ठ में नहीं रहता, योगियों के हृदय का भी उल्लंघन कर जाता हूँ। परंतु जहाँ मेरे भक्त मेरा कीर्तन करते हैं वहाँ तो अवश्य ही रहता हूँ।'

ऐसे भगवान को वश में करनेवाले मनुष्यलोग भगवद्गुण नामकीर्तन करके भगवान में अखण्ड स्थिति प्राप्त कर लेते हैं। भगवान गुण, रूप, माधुर्य, तेज, सुख, दया, करुणा, सौहार्द, क्षमा और प्रेम के सागर हैं। जगत में कहीं भी, इनमें से किसी भी गुण का कोई भी अंश दिखने में आता है वह सारा का सारा भगवान के उस अनंत भंडार में से ही आता है। भगवन्नाम कीर्तन करनेवाले भक्त अनंत सुखराशि, आनंदघन भगवान के साथ अपना ताल मिला लेते हैं। भगवान के हृदय के साथ अपना हृदय मिला लेते हैं। दुन्यवी लोगों के लिए जो दुःखालय है वही संसार उस भगवान के प्यारे के लिए भगवान की लीलाकृति स्वरूप सुखालय बन जाता है। उसकी हर एक रचना भक्त को भगवान की स्मृति कराती है। स्वर और व्यंजन उसके लिए शब्दब्रह्म बन जाते हैं। उसे दृश्यमात्र में भगवान की अलौकिक आभा, ज्योतिपुँज दिखाई देता है।

धन्य हैं ऐसे भक्त जिन्होंने भक्ति के साथ संयम और तत्परता से भुवनों को पावन कर लिया, त्रिभुवनपति को वश में कर लिया।

*

# सिंहस्थ ( कुंभ महापर्व ) की पौराणिक महिमा

उज्जैन (अवन्तिका) भारतवर्ष की उन पवित्र सात नगरियों में से एक है, जहाँकी यात्रा मोक्षदायिनी मानी जाती है। यथा —

**अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवन्तिका।**
**पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ॥**

अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, काँची, उज्जैन और द्वारका इन सात नगरियों में काशी सर्वश्रेष्ठ मानी गई, किन्तु उससे भी दस गुना पुण्यदा अवन्तिका (उज्जैन) है ऐसा उल्लेख स्कन्दपुराण में है।

स्कन्दपुराणांतर्गत अवन्त्य खण्ड के अधिकांश भाग में उज्जैन और उसके समीपवर्ती स्थानों का वर्णन भरा पड़ा है। इसके अनुसार भगवान शंकर ने यहाँ दूषण असुर पर विजय प्राप्त की थी। इसीलिए इस स्थान का नाम उज्जयिनी पड़ा। समय की धारा में इसके नाम बदलते रहे हैं। भिन्न भिन्न काल में इस नगरी के भिन्न भिन्न नाम ज्ञात होते हैं। यथा — कनकश्रृंगा, कुशस्थली, अवन्ति, उज्जयिनी, पद्मावती, कुमुदवती, अमरावती, विशाला आदि। पाणिनि ने अपने सूत्र ८-१-१७६ में अवन्तिका का उल्लेख किया है। पतंजलि ने भी अपने महाभाष्य में लिखा है : 'यदि मनुष्य प्रभात के समय उज्जयिनी से चलना प्रारम्भ करे तो पश्चिम में माहिष्मती में उसे सूर्य भगवान के दर्शन होंगे।'

इस महान नगरी में वर्षभर अनेकों पर्व, यात्राएँ, धार्मिक एवं सांस्कृतिक उत्सव आदि आयोजित होते रहते हैं तथा बारह वर्ष में महान कुम्भ-सिंहस्थ महापर्व के भी सम्मिलित होने से दस महत्त्व के योग उपस्थित होते हैं जिससे इस अवसर पर यहाँ स्नान का अत्यधिक महत्त्व माना गया है। पुराणों में इस पर्व को मोक्षदायक कहकर गुणगान किया गया है कि —

**मेषराशिगते सूर्ये, सिंहराश्यां बृहस्पतौ ।**
**अवन्तिकायां भवेत्कुम्भः सदामुक्तिप्रदायकः ॥**

कुंभ क्यों मनाया जाता है, इस पर एक अति प्राचीन कथा है :

पौराणिक गाथानुसार हिमालय पर्वत के समीप क्षीरोद नामक समुद्र तट के थोड़े अन्तर पर देवताओं और दानवों द्वारा मंदराचल पर्वत को मथनी बनाकर, सर्पराज वासुकी का रस्सी सदृश उपयोग करके सागर-अन्वेषण हेतु समुद्र-मंथन आरम्भ किया गया था। देवता और दानव लोग अपार उत्साह से समुद्र को मथने में जुटे हुए थे। देव-दानवों की संगठनात्मक शक्ति के आगे रत्नाकर को झुकना पड़ा। क्रमशः अन्यान्य १४ रत्नों के साथ अन्त में भगवान धन्वन्तरि अमृत का कलश हाथों में लिये बाहर आ गये। अमृत-प्राप्ति से चारों ओर प्रसन्नता का वातावरण छा गया। देव-दानवों का श्रम

**इन १२ वर्षों के भीषण संग्राम में जयन्त चार स्थानों पर दानवों की पकड़ में आ गया था । आपसी संघर्ष और छीना-झपटी में अमृत की कुछ बूँदें इन्हीं स्थानों पर छलक पड़ीं थीं । ये स्थान हैं मृत्युलोक में भारतवर्ष के प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन ।**

सफल हो जाने से वे अपनी थकान भी भूल चुके थे। इधर देवता चिन्तित होने लगे कारण कि यदि राक्षस अमृतपान कर लेंगे तो वे सदैव देवताओं को कष्ट देते रहेंगे। इसलिए अमृतपान करने का अवसर असुरों को प्राप्त न हो यह सोचकर देवताओं ने देवराज इन्द्र के पुत्र जयन्त को संकेत किया और जयन्त अमृत-कुंभ लेकर गगन में उड़ चला।

राक्षसों के गुरु शुक्राचार्य ने देवताओं की यह युक्ति जान ली। उन्होंने दैत्यों से जयन्त का पीछा करने को कहा। देवता अमृतपान करके अमर न हो जावें इस भावना से प्रेरित होकर राक्षसों ने जयन्त का पीछा किया और फल स्वरूप देव-दानवों का भयंकर संग्राम छिड़ गया। कहते हैं यह संग्राम देवताओं के १२ दिन अर्थात् मनुष्यों के १२ वर्षों तक चला था।

जयन्त ने इस अवसर पर अमृत-कुंभ को स्थान-स्थान पर छुपाया और देवताओं को भी स्थानान्तरित किया। इन १२ वर्षों के भीषण संग्राम में जयन्त चार स्थानों पर

**सूर्य चन्द्र और बृहस्पति इन तीनों ग्रहों की जिन विशिष्ट परिस्थितियों में कुंभ में से अमृतबूँदें पृथ्वी के जिन चारों स्थानों पर छलकीं थीं, उन्हीं चारों स्थानों पर ग्रहों के विशिष्ट योग के अवसर पर कुंभ-पर्व मनाने की परंपरा है ।**

दानवों की पकड़ में आ गया था। आपसी संघर्ष और छीना-झपटी में अमृत की कुछ बूँदें इन्हीं स्थानों पर छलक पड़ीं थीं। ये स्थान हैं मृत्युलोक में भारतवर्ष के प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन ।

अमृतकुंभ हरण करने के लिए दानवों ने सम्पूर्ण शक्ति लगा दी थी, किन्तु देवताओं के संगठन एवं कूट चालों ने उन्हें सफल नहीं होने दिया। अमृत-कलश के संरक्षण में देवों में से सूर्य, चन्द्र और बृहंस्पति का विशेष सहयोग रहा था। चन्द्र ने कलश को गिरने से बचाया, सूर्य ने उसे फूटने से बचाया और बृहस्पति (गुरु) ने असुरों के हाथों में जाने से बचाया।

**चन्द्रः प्रस्रवणाद् रक्षां, सूर्यो विस्फोटनाद् दधौ।**
**दैत्येभ्यश्च गुरु रक्षां सौरिर्देवेन्द्रजाद्भयात् ॥**

इस कारण सूर्य, चन्द्र और बृहस्पति इन तीनों ग्रहों की जिन विशिष्ट परिस्थितियों में कुंभ में से अमृतबूँदें पृथ्वी के जिन चारों स्थानों पर छलकीं थीं, उन्हीं चारों स्थानों पर ग्रहों के विशिष्ट योग के अवसर पर कुंभ-पर्व मनाने की परंपरा है। प्रयाग, हरिद्वार, नासिक तथा उज्जैन वे ही चार तीर्थराज हैं। धर्म-जगत का यह दृढ़ विश्वास है कि अमृत-कलश से छलकी बूँदों से ये तीर्थ तथा यहाँ की पवित्र नदियाँ गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी तथा क्षिप्रा अमृतमयी हो गई हैं।

अन्त में इस भीषण संग्राम को समाप्त करने के लिए भगवान विष्णु ने मोहिनी रूप धारण किया और अपने ही वर्ग देवों में अमृत का पान करा दिया ।

उक्त चार तीर्थों के कुम्भ-पर्व के लिए स्कन्दपुराण में गुरु, चन्द्र तथा सूर्य की राशियों के लिए ये प्रमाण प्राप्त होते हैं :

(१) प्रयाग

**मकरे च दिवानाथे वृषराशिस्थिते गुरौ ।**
**प्रयागे कुंभयोगो वै माघमासे विधुक्षये ॥**
**मेषराशिगतेजीवे मकरे चन्द्रभास्करौ ।**
**अमावस्यातदायोगः कुम्भाख्यस्तीर्थ नायके ॥**

*'माघी अमावस्या को मकर राशि में सूर्य चन्द्र हों तथा वृष का गुरु हो, दूसरे प्रमाण में मेष का गुरु हो तो प्रयाग में कुम्भ पर्व होता है।'*

(२) हरिद्वार

**कुम्भराशिगतेजीवे यद्धिनेमेषगो रविः ।**
**हरिद्वारे कृतस्नानं पुनरावृत्तिवर्जनम् ॥**
**पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ ।**
**गंगाद्वारे भवेद्योगः कुम्भनामात्तदोत्तमैः ॥**

*'कुम्भ राशि के गुरु में जब मेष का सूर्य आवे तब हरिद्वार में कुम्भ-पर्व होता है।'*

(३) नासिक

**सिंहराशिगते सूर्ये सिंहराशौ बृहस्पतौ ।**
**गोदावर्यां भवेत्कुंभः पुनरावृत्तिवर्जनम् ॥**

*'सिंह राशि के गुरु में जब सिंह राशि का सूर्य हो तब गोदावरी तट पर नासिक में कुंभ पर्व होता है।'*

(४) उज्जैन

**मेषराशिगते सूर्ये सिंह राशौ बृहस्पतिः।**
**कुम्भयोगसविज्ञेयः भुक्तिमुक्तिप्रदायकः॥**

*'कुंभ (सिंहस्थ) पर्व सिंहराशि के गुरु में मेष का सूर्य आने पर मनाया जाता है।'*

वैशाखी पूर्णिमा का स्नान प्रमुख (शाही) स्नान माना जाता है। आवश्यक दस योग में से अधिक योग उस अवसर पर उज्जैन में स्थित होंगे। इस विषय में स्कन्दपुराण में लिखा है कि :

**माघवे धवले पक्षे सिंहे जीवेत्वजे रवौ।**
**तुलाराशिनिशानाथे स्वाति ये पूर्णिमा तिथौ॥**
**व्यतीपाते तु संप्राप्ते चन्द्रवासरसंयुते।**
**कुशस्थली महाक्षेत्रे स्नाने मोक्षमवाप्नुयात् ॥**

*'जब वैशाख मास हो, शुक्ल पक्ष हो और सूर्य सिंह राशि पर, चन्द्रमा तुला राशि पर हो, साथ ही स्वाति नक्षत्र, पूर्णिमा तिथि और सोमवार का दिन हो तब उज्जयिनी नगरी की पावन क्षिप्रा में स्नान करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।'*

विष्णुपुराण में सिंहस्थ के महत्त्व के बारे में लिखा है कि जो पुण्य नर्मदा में एक करोड़ बार स्नान करने से प्राप्त होता है वही पुण्य कुंभ पर्व के एक बार स्नान करने से प्राप्त होता है। स्कन्दपुराण में अवन्तिका खण्ड के २८ वें अध्याय में उज्जयिनी के सोमतीर्थ के वर्णन में सोमा या सोमवती नदी को क्षिप्रा कहा गया है तथा क्षिप्रा-स्नान मोक्षदायक बताया गया है।

अन्य महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि १२ वर्ष के पश्चात् दूर-सुदूर अरण्य, वन, पर्वत, गिरि-गुफाओं, कन्दराओं एवं आश्रमों से उच्च कोटि के साधु-सन्त-महात्मागण पावन कुंभ के अवसर पर उज्जैन में स्नान एवं हरिचर्चा के लिए आते हैं। इस प्रकार विभिन्न राज्यों से आई हुई सभी धर्मप्रेमी जनता को अनेक महान चैतन्य-स्वरूप संतों के दर्शन एवं सत्संग का अमृतपान करने का सुअवसर भी मिल जाता है।

पुराणों में भी आया है कि :

**गंगा पापं शशि तापं दैन्यं कल्पतरुस्तथा।**
**पापं तापं च दैन्यं च घ्नन्ति सन्तो महाशयाः॥**

*'गंगा पाप को, चन्द्रमा ताप को और कल्पतरु दीनता को हर लेता है जबकि संत-महापुरुष पाप, ताप एवं दीनता को एक साथ ही हर लेते हैं।'*

हम सबका बड़ा ही सौभाग्य है कि इस बार इस महापावन अवसर पर समग्र विश्व-चैतन्य के साथ तादात्म्य साधे हुए ब्रह्मज्ञानी संत-शिरोमणि पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू उज्जैन पधार रहे हैं। उनके विद्युन्मय सान्निध्य में भक्तियोग, नादानुसंधान-योग, कीर्तन-योग, ज्ञान-योग तथा कुंडलिनी योग और वेदान्त शक्तिपात-वर्षा का लाभ धर्मपरायण जनता को प्राप्त होगा :

दिनांक १६ अप्रैल से १८ अप्रैल,
२१ अप्रैल से २५ अप्रैल,
१ मई से ८ मई,
१४ मई से १८ मई

**' जब वैशाख मास हो, शुक्ल पक्ष हो और सूर्य सिंह राशि पर, चन्द्रमा तुला राशि पर हो, साथ ही स्वाति नक्षत्र, पूर्णिमा तिथि और सोमवार का दिन हो तब उज्जयिनी नगरी की पावन क्षिप्रा में स्नान करने से मोक्ष की प्राप्ति होती है।'**

इसी प्रकार सिंहस्थ के पाँच प्रमुख स्नान-तिथियाँ भी निम्नप्रकार हैं :

प्रथम स्नान : चैत्र शुक्ल पूर्णिमा १७ अप्रैल १९९२
द्वितीय स्नान : वैशाख कृष्ण अमावस्या २ मई १९९२
तृतीय स्नान : वैशाख शुक्ल तृतीया ५ मई १९९२
चतुर्थ स्नान : वैशाख शुक्ल पंचमी ७ मई १९९२
पंचम स्नान : वैशाख शुक्ल पूर्णिमा १६ मई १९९२

दिनांक : १६ मई '९२ को वैशाख पूर्णिमा होने से यह शाही स्नान का पर्व होगा। पौराणिक विश्वास है कि उस दिन क्षिप्रा में स्नान करने से मनुष्य आवागमन के चक्र से मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त होता है।

*

## संत महिमा

दो संन्यासी युवक यात्रा करते करते किसी गाँव में पहुँचे। लोगों से पूछा : "हमें एक रात्रि यहाँ रहना है। किसी पवित्र परिवार का घर दिखाओ।" लोगों ने बताया कि : "वह एक चाचा का घर है। साधु-महात्माओं का आदर-सत्कार करते हैं। 'अखिल ब्रह्मांडमां एक तुं श्रीहरि' का पाठ उनका पक्का हो गया है। वहाँ आपको ठीक रहेगा।" उन्होंने उन सज्जन चाचा का पता बताया।

दोनों संन्यासी वहाँ गये। चाचा ने प्रेम से सत्कार किया, भोजन कराया और रात्रि-विश्राम के लिये बिछौना बिछा दिया। रात्रि को कथा-वार्ता के दौरान एक संन्यासी ने प्रश्न किया :

"आपने कितने तीर्थों में स्नान किया है? कितनी तीर्थयात्रा की हैं? हमने तो चारों धाम की तीन-तीन बार यात्रा की है।"

चाचा ने कहा : "मैंने एक भी तीर्थ का दर्शन या स्नान नहीं किया है। यहीं रहकर भगवान का भजन करता हूँ और आप जैसे भगवद् स्वरूप अतिथि पधारते हैं तो सेवा करने का मौका लेता हूँ। अभी तक कहीं भी नहीं गया हूँ।"

दोनों संन्यासी आपस में सोचने लगे : "ऐसे व्यक्ति का अन्न खाया! अब यहाँसे चले जायें तो रात्रि कहाँ बिताएँ? यकायक चले जायें तो उसको दुःख भी होगा। चलो, कैसे भी करके इस विचित्र वृद्ध के यहाँ रात्रि बिता दें। जिसने एक भी तीर्थ नहीं किया उसका अन्न खा लिया! हाय!' आदि आदि। इस प्रकार विचारते सोने लगे लेकिन नींद कैसे आवे? करवटें बदलते बदलते मध्यरात्रि हुई। इतने में द्वार से बाहर देखा तो गौ के गोबर से लीपे हुए बरामदे में एक काली गाय आई... फिर दूसरी आई... तीसरी... चौथी... पाँचवीं... ऐसा करते करते कई गायें आईं। हरेक गाय वहाँ आती, बरामदे में लोटपोट होती और सफेद हो जाती तब अदृश्य हो जाती। ऐसी कितनी ही काली गायें आयीं और सफेद होकर विदा हो गईं। दोनों संन्यासी फटी आँखों से देखते ही रह गये। दंग रह गये कि यह क्या कौतुक हो रहा है!

आखिरी गाय जाने की तैयारी में थी तो उन्होंने उसे प्रणाम करके पूछा :

"हे गौ माता! आप कौन हो और यहाँ कैसे आना हुआ? यहाँ आकर आप श्वेतवर्ण हो जाती हो इसमें क्या रहस्य है? कृपा करके आपका परिचय दें।"

गाय बोलने लगी : "हम गायों के रूप में सब तीर्थ हैं। लोग हममें गंगे हर.. यमुने हर.. नर्मदे हर... आदि बोलकर गोता लगाते हैं। हममें अपना पाप धोकर पुण्यात्मा होकर जाते हैं और हम उनके पापों की कालिमा मिटाने के लिये द्वन्द्वमोह से विनिर्मुक्त आत्मज्ञानी, आत्मा-परमात्मा में विश्रान्ति पाये हुए सत्पुरुषों के आँगन में आकर पवित्र हो जाते हैं। हमारा काला बदन पुनः श्वेत हो जाता है। तुम लोग जिनको अशिक्षित, गँवार, बूढ़ा समझते हो वे बुजुर्ग तो जहाँसे तमाम विद्याएँ निकलती हैं उस आत्मदेव में विश्रांति पाये हुए आत्मवेत्ता संत हैं।

**तीर्थानां च परं तीर्थं कृष्णनाम महर्षयः।**
**तीर्थी कुर्वन्ति जगतीं गृहीतं कृष्णनाम यैः॥**

'हे ऋषियों! समस्त तीर्थों में बड़ा तीर्थ कृष्णनाम है। जो लोग श्रीकृष्ण का उच्चारण करते हैं वे सम्पूर्ण जगत को तीर्थ बना देते हैं।'

ऐसे आत्माराम ब्रह्मवेत्ता महापुरुष जगत को तीर्थरूप बना देते हैं। अपनी दृष्टि से, संकल्प से, संग से, जन-साधारण को उन्नत कर देते हैं। ऐसे पुरुष जहाँ ठहरते हैं, उस जगह को भी तीर्थ बना देते हैं। जैन धर्म ने ऐसे पुरुषों को तीर्थंकर (तीर्थ बनानेवाले) कहा है।

*

# भगवान शंकर के द्वादश ज्योतिर्लिंग

हिन्दू धर्म में आस्था रखनेवाले करोड़ों हिन्दू श्री बद्रीनाथ, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम् और द्वारकाजी, इन चार

धाम की तीर्थयात्रा के बाद भगवान शंकर के द्वादश ज्योतिर्लिंगों को ही महत्त्व देते हैं। स्वयंभू ज्योतिर्लिंगों की चर्चा करते ही द्वादश ज्योतिर्लिंगों में प्रमुख भूतभावन भगवान महाकाल की नगरी उज्जयिनी सबसे पहले दृष्टि समक्ष आती है। भगवान महाकाल समस्त मृत्युलोक का प्रतिनिधित्व करते हैं। भगवान महाकाल समग्र मानवलोक के अधिपति होने से उज्जैन को सम्पूर्ण मानवलोक की धर्मनगरी के रूप में महत्त्व तथा गौरव प्राप्त हुआ है। पुराणों में भी आया है कि :

आकाशे तारकं लिंगं पाताले हाटकेश्वरम्।
मृत्युलोके महाकालं लिंगत्रयं नमोऽस्तुते ॥

स्कन्दपुराण में 'कालचक्रप्रवर्तक्रो महाकाल: प्रतापन:' कहकर कालगणना के प्रवर्तक के रूप में महाकाल का स्वीकार किया गया है। महाकाल को कालगणना के केन्द्रबिन्दू मानने के लिए अन्य भी अनेक कारण हैं। उज्जैन को भारत का मध्यस्थान (नाभि-क्षेत्र) माना गया है अत: महाकाल की स्थिति मणिपुर चक्र पर मानी गई है।

दूसरी बात, भूगोल की कर्क रेखा (कर्कवृत्त) और भूमध्य रेखा उज्जैन में ही एक दूसरे को मिलती हैं इससे कालगणना की सरलता रहती है। आज भी पंचांग-निर्माण में काल-गणना यहाँ की ही ली जाती है।

## १. भगवान महाकालेश्वर

भगवान महाकालेश्वर की पौराणिक कथा शिवपुराण में इस प्रकार है :

उज्जैन में वेदप्रिय नामका एक पवित्र धर्मात्मा ब्राह्मण रहता था। वह योगसिद्ध था। उस समय रत्नमाला पर्वत पर रहनेवाला दूषण नामक एक राक्षस नगरजनों को खूब सताता था। अत: भयभीत नगरजन उस धर्मात्मा ब्राह्मण की शरण में गये और सहाय करने के लिए प्रार्थना की।

वेदप्रिय ने रुद्र की कठिन तपस्या की। उनके तप के प्रभाव से भगवान महाकाल पृथ्वी को चीरकर प्रकट हुए, दूषण राक्षस का संहार किया और भक्तों की प्रार्थना से सदा के लिए वहीं विराजमान हुए। आज भी हररोज प्रात:काल में भगवान महाकाल के लिंग को ताजी चिता-भस्म का लेपन किया जाता है और प्रात: चार बजे भस्म-आरती होती है।

अग्निपुराण के मुताबिक यह सर्वोत्तम तीर्थ माना गया

**स्वयंभू ज्योतिर्लिंगों की चर्चा करते ही द्वादश ज्योतिर्लिंगों में प्रमुख भूतभावन भगवान महाकाल की नगरी उज्जयिनी सबसे पहले दृष्टि समक्ष आती है। भगवान महाकाल समस्त मृत्युलोक का प्रतिनिधित्व करते हैं।**

है। इसके दर्शन से भक्त की मुक्ति शीघ्र ही होती है। उनके दर्शनार्थी की अकाल मृत्यु से रक्षा होती है।

इस ज्योतिर्लिंग का स्तुतिगान इस प्रकार है :

**दूषणासुरनाशाय संभूतं रक्तलोचनम् ।**
**वेदविद्यावरोधस्य विनाशाय च तत्परम् ।**
**उज्जयिन्यांश्च महाकालरूपं रुद्रं पिनाकिनम् ।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम् ॥**

*'उज्जयिनी में निवास करनेवाले, महाकाल रूप, पिनाक धनुष्य धारण करनेवाले, दूषणासुर का नाश करने के लिए उत्पन्न हुए, लाल लोचनवाले, वेदविद्या में आनेवाले अवरोधों का नाश करने में जो तत्पर हैं ऐसे, सर्व देहधारियों के शरण्य, ललाट पर चन्द्र को धारण करनेवाले भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वंदन करता हूँ।'*

## २. श्री सोमनाथ महादेव

सौराष्ट्र में वेरावळ (प्रभास पाटण) के पास इस ज्योतिर्लिंग का स्थान है। ऋग्वेद, स्कंदपुराण और महाभारत में इस स्थान का उल्लेख आता है।

दक्ष प्रजापति की सत्ताइस कन्याएं थीं। उनकी शादी चन्द्रमा के साथ की थी। उन कन्याओं में रोहिणी अधिक सुन्दर होने के कारण चन्द्र को उसके प्रति ज्यादा आसक्ति थी। अत: दूसरी बहनों को ईर्ष्या हुई और उन्होंने पिता से शिकायत की। दक्ष प्रजापति ने सबके प्रति समान भाव से प्रेम रखने के लिए चन्द्र को समझाया लेकिन उसने कुछ नहीं सुना। अत: क्रोध में आकर दक्ष प्रजापति ने चन्द्र को 'क्षय' (क्षीण) होने का शाप दिया। परिणाम स्वरूप चन्द्र की शक्ति दिनोदिन क्षीण होती चली। वह घबराया और दक्ष प्रजापति के आगे गिड़गिड़ाया।

दक्ष ने शाप वापस खींच लिया और सब पत्नियों के प्रति समान भाव से प्रेम रखने की शर्त रखी और पश्चिमी सागर तट पर सौराष्ट्र क्षेत्र में प्रभास पाटण में भगवान शंकर का तप करने के लिए कहा।

चन्द्र की उग्र तपस्या से भगवान शिव प्रसन्न हुए और चन्द्र को आधा मास क्षीण होने का तथा बाकी के आधे मास में पुन: शक्ति प्राप्त होने का वरदान दिया। चन्द्र की प्रार्थना से भगवान शंकर प्रभास पाटण में स्थिर हुए और श्री सोमनाथ महादेव कहलाये। श्रावण मास की पूर्णिमा को तथा शिवरात्रि को यहाँ बड़ा मेला लगता है।

इस ज्योतिर्लिंग की स्तुति इस प्रकार है :

**रक्षकं रजनीशस्य दक्षशापनिवारणात् ।**
**क्षयकुष्ठादिरोगाणां भीषजं भवदारकम् ।**
**सोमनाथस्वरूपेण प्रभासे कृतसंस्थितम् ।**
**चन्द्रमोलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम् ॥**

*'दक्ष के शाप का निवारण करके चन्द्र का रक्षण करनेवाले, क्षय, कुष्ठ आदि रोगों के औषधरूप, संसार रूपी सागर को निवृत्त करनेवाले, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमोलीश्वर को मैं वंदन करता हूँ।'*

## ३. श्री मल्लिकार्जुन

यह स्थान तामिलनाडु में कृष्णा नदी के तट पर श्रीशैल पर्वत पर आया हुआ है। महाभारत और शिवपुराण में इसका उल्लेख मिलता है।

श्री गणेश और कार्तिकेय दोनों भगवान शंकर के पुत्र थे। उनकी शादी के लिए विवाद हुआ। दोनों भाई चाहते थे कि अपनी शादी प्रथम हो। तब भवानी-शंकर ने निर्णय दिया कि जो भाई पृथ्वी की परिक्रमा करके प्रथम आएगा उसकी शादी प्रथम होगी। यह सुनते ही कार्तिकेय अपने वाहन मयूर पर आरूढ होकर पृथ्वी की परिक्रमा करने चले। गणेशजी तो बड़ी तोंदवाले देव ठहरे! *खासा मोटा शरीर और उनका वाहन भी चूहा!*

शास्त्रों के ज्ञाता गणेशजी ने अपने माता - पिता शिव-पार्वती को पास-पास में एक ही आसन पर बैठाये और सात बार उनकी प्रदक्षिणा की। बस, इस प्रकार पृथ्वी की प्रदक्षिणा करने का अधिकार प्राप्त कर लिया। जब कार्तिक स्वामी पृथ्वी की प्रदक्षिणा पूरी करके आये तब तो गणेशजी विश्वरूप प्रजापति की रिद्धि और सिद्धि नामकी दो कन्याओं से शादी कर चुके थे। यह जानकर कार्तिक स्वामी रूठकर श्रीशैल पर्वत पर चले गये। माता-पिता ने नारदजी को भेजकर उन्हें समझाने का प्रयास किया लेकिन वे माने नहीं। तब शिव-पार्वती स्वयं श्रीशैल पर्वत पर जाने के लिए रवाना हुए। यह जानकर कार्तिकजी वहाँ से भाग निकलने के लिए

तैयार हुए। तब भगवान भोलेनाथ श्रीशैल पर्वत पर ज्योतिर्लिंग के स्वरूप में प्रकट हुए और वह स्थान मल्लिकार्जुन के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह स्थान शक्तिपीठ भी कहलाता है। मल्लिकार्जुन का पूजन करने से अश्वमेध यज्ञ करने का पुण्य मिलता है।

इनकी स्तुति इस प्रकार है :

**अनुनेतुं षडास्यं च श्रीशैलगतमीश्वरम् ।**
**पुत्रस्नेहातिरेकस्य दृष्टान्तं परमद्भुतम् ।**
**मल्लिकार्जुनरूपेण श्रीशैलाद्रिनिवासिनम् ।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम् ॥**

*'पुत्रस्नेहातिरेक के परम अद्‌भुत दृष्टान्त स्वरूप, कार्तिकदेवजी को वापस लाने के लिए श्रीशैल पर्वत पर गये हुए और वहाँ मल्लिकार्जुन रूप से निवास करनेवाले, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वंदन करता हूँ।'*

## ४. ओंकारेश्वर

मध्य प्रदेश में मांधाता पर्वत पर नर्मदा-कावेरी के संगम स्थान पर यह मंदिर स्थित है। सुप्रसिद्ध सूर्यवंशी राजा मांधाता ने इस स्थान में घोर तपस्या करके भगवान शंकर को प्रसन्न किये थे। ओंकारेश्वर के साथ अमलेश्वर का मंदिर नर्मदा के दक्षिण तट पर है। ऐसा माना जाता है कि एक लिंग में से दो भाग होकर भगवान दो स्थान में अलग अलग स्वरूप में विराजमान हुए। उनमें प्रणव के रूप में ओंकारेश्वर और पार्थिव रूप में अमलेश्वर के नाम जाने जाते हैं। इस स्थान में कुबेर ने सौ वर्ष तक तप किया था। किरातार्जुन तथा परशुराम का युद्ध यहीं हुआ था। पास में ही मंडलेश्वर तीर्थ है। वहाँ शंकराचार्य और मंडनमिश्र का शास्त्रार्थ हुआ था।

इस तीर्थ की स्तुति इस प्रकार है :

**कामनापूर्णकर्तारं विन्ध्याचलकृपाकरम् ।**
**कावेरीरेवयोः पुण्ये संगमे नित्यवासिनम् ।**
**ओंकारेश्वरमीशानं मांधातृपुरवासिनम् ।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम् ॥**

*'कामनाएं पूर्ण करनेवाले, विन्ध्याचल पर कृपा करनेवाले, कावेरी और नर्मदा के पुण्य संगम में नित्य निवास करनेवाले, भगवान ओंकारेश्वर के रूप में मांधातापुर में निवास करनेवाले, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वंदन करता हूँ।'*

## ५. श्री वैद्यनाथ

हावड़ा - पटना रेलवे लाइन पर जसीडीह स्टेशन से २ कि. मी. दूर महादेव का मंदिर है। रावण ने भगवान शंकर को प्रसन्न करके उनसे प्राप्त किया हुआ वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग यहाँ स्थित है।

रावण वैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग महादेव को आकाश मार्ग से लंका में ले जा रहा था । देवों को यह अच्छा नहीं लगा। अतः वरुणदेव रावण के पेट में प्रविष्ट हो गये और रावण को लघुशंका करने की तीव्र इच्छा हुई। वह पृथ्वी पर उतर आया। वहाँ वृद्ध ब्राह्मण के रूप में भगवान विष्णु हाजिर थे। रावण ने कुछ देर के लिए शिवलिंग ब्राह्मण को पकड़ने के लिए दिया।

रावण लघुशंका करने बैठा लेकिन उसके पेट में वरुणदेव थे इसलिए समय अधिक लगा। वृद्ध ब्राह्मण ने थककर शिवलिंग जमीन पर रख दिया। बस, शिवलिंग जमीन में गहरा, पाताल तक पहुँच गया। महादेवजी ने रावण को यह ज्योतिर्लिंग देते हुए कहा था : 'इस लिंग

को लंका के सिवाय और कहीं रखना नहीं। अगर कहीं भी जमीन पर रखेगा तो वहाँ से पुनः उठाना असंभव हो जाएगा।'

... और ऐसा ही हुआ। वह शिवलिंग भूमि में पाताल तक उतर चुका था। केवल आठ उंगल बाहर रहा। रावण निराश हो गया। उसने चन्द्रकूप बनाया। उसमें सब तीर्थों का जल इकट्ठा किया और उस सर्वतीर्थजल से भगवान शिव का अभिषेक किया। तदनन्तर आकाशवाणी के द्वारा आश्वासन पाकर वह लंका चला गया।

दूर दूर से जल लाकर यहाँ ज्योतिर्लिंग का अभिषेक करने का बड़ा माहात्म्य है। कहा जाता है कि भगवान वैद्यनाथ की भक्ति से कुष्ठ रोग मिट जाता है। अतः कई रोगी दर्शनार्थ यहाँ आते हैं।

इस ज्योतिर्लिंग का स्तुतिगान इस प्रकार है :

**अर्पिते दशमे मौलौ पौलस्त्याय वरप्रदम्।**
**स्मशाने प्रकटीभूतं भूतिभूषं भुजंगिनम्।**
**वैद्यनाथं महादेवं वामदेवं विपद्धरम्।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम्॥**

*'रावण ने जब अपना दसवाँ मस्तक धर दिया तब उसको वरदान देनेवाले, स्मशान में प्रकट होनेवाले, भस्म से सुशोभित, नागों को धारण करनेवाले, वामदेव के रूप में भगवान वैद्यनाथ को, विपत्तियों को हरनेवाले, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वंदन करता हूँ।'*

## ६. श्री भीमशंकर

महाराष्ट्र में बम्बई से २०० मील दूर दक्षिण-पूर्व में सह्याद्रि पर्वत में भीमा नदी के तट पर यह स्थान आया हुआ है। वहाँ जाने के लिए केवल शिवरात्रि के समय पूना से भीमशंकर तक बस जाती है।

भगवान शंकर ने भीमासुर का वध करके इस स्थान में आराम किया। उस समय अवध का राजा भीमक वहाँ तप करता था। शिवजी ने प्रसन्न होकर उसको दर्शन दिये और वहाँ स्थायी ज्योतिर्लिंग के रूप में विराजमान हुए।

इसकी स्तुति इस प्रकार है :

**भीमासुरस्य हन्तारं कुंभकर्णसुतस्य च।**
**अद्भुतासुरहन्तारं पिशिताशनपूजितम्।**
**भीमशंकरमद्रीशतनयाय प्रियमीश्वरम्।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम्॥**

*'भीमासुर का, कुंभकर्ण के पुत्र का तथा अद्भुतासुर का संहार करनेवाले, मांसाहारियों के द्वारा पूजे जानेवाले, माँ पार्वती के प्रिय भगवान भीमशंकर को, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वंदन करता हूँ।'*

## ७. श्री रामेश्वर

तामिलनाडु के रामानन्द जिले में जहाँ बंगाल का उपसागर और हिन्दी महासागर मिलते हैं वहाँ पुराण-प्रसिद्ध गन्धमादन पर्वत पर रामेश्वर भगवान का मंदिर आया हुआ है।

भगवान श्रीराम ने लंका-विजय पर जाते समय अपने हाथों से इस ज्योतिर्लिंग की स्थापना की थी इससे उसका नाम रामेश्वरम् पड़ा। लंका-विजय के बाद राम को ब्रह्महत्या का दोष लगा था क्योंकि रावण पुलस्त्य कुल का ब्राह्मण था। इस दोष का निवारण करने के लिए शिवपूजा करनी थी। तब हनुमानजी ने सीताजी के हाथ से समुद्र की रेत में से बनाये हुए शिवलिंग की स्थापना की। श्रीराम ने लंका-विजय के बाद रामेश्वर की पूजा करने से पहले हनुमानजी ने स्थापित किये हुए शिवलिंग की पूजा की थी। हनुमानजी द्वारा स्थापित शिवलिंग काशी-विश्वनाथ के नाम से प्रख्यात है।

इस ज्योतिर्लिंग का स्तोत्र इस प्रकार है :

**दशाननविनाशाय जानकीमोचनाय च।**
**लंकागमनकार्याय सेतुबन्धुं च सागरे।**
**पूजितं रामचन्द्रेण रामेश्वरमुमापतिम्।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम्॥**

*'लंकेश रावण का विनाश करने के लिये, सीताजी को मुक्त करने के लिये, लंका जाने के लिए सागर पर सेतू बाँधने के लिए, श्रीराम के द्वारा पूजित उमापति भगवान रामेश्वर को, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वन्दन करता हूँ।'*

## ८. श्री नागेश्वरम्

सौराष्ट्र में द्वारिका के पास नागेश्वर महादेव का

मंदिर है। द्वारिका से बस द्वारा वहाँ जा सकते हैं।

दारुक राक्षस ने शिवभक्त सुप्रिय वैश्य को कैद किया और उसका वध करने को उद्यत हुआ। सुप्रिय की प्रार्थना सुनकर भगवान शंकर स्वयं वहाँ प्रकट हुए और दारुक का संहार किया। फिर भगवान वहीं पर ज्योतिर्लिंग के स्वरूप में स्थिर हुए।

इस तीर्थ की स्तुति इस प्रकार है :

**दुष्टदुर्मतिहंतारं पापघ्नं विघ्ननाशकम्।**
**विदारकं त्रिशूलेन मांधातृहैहयस्य च।**
**नागेश्वरं नागहारं नागेन्द्रकृतिवाससम्।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम्॥**

*'दुष्टों की दुर्मति को नष्ट करनेवाले, पाप और विघ्नों का नाश करनेवाले, मांधाता और हैहय को त्रिशूल से विदीर्ण करनेवाले, नागों का हार धारण करनेवाले, हाथी के चर्म का वस्त्र धारण करनेवाले भगवान नागेश्वर को, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वन्दन करता हूँ।'*

## ९. श्री विश्वनाथ

काशी-वाराणसी में स्थित यह मंदिर हिन्दूओं का परम पवित्र यात्राधाम है। कहा जाता है कि इस स्थान पर भगवान विष्णु ने सृष्टि उत्पन्न करने की इच्छा से तपस्या करके भगवान शंकर को प्रसन्न किये थे। तदनन्तर भगवान विष्णु ने शयन किया और उनकी नाभि में से कमल उत्पन्न हुआ। कमल में से ब्रह्माजी प्रकट हुए जिन्होंने समग्र सृष्टि की रचना की। ऐसा माना जाता है कि प्रलय काल में भगवान शंकर इस नगरी को अपने त्रिशूल पर धारण करते हैं इससे इस नगरी का लोप नहीं होता। सृष्टि-स्थान भी काशी को माना जाता है।

इस ज्योतिर्लिंग की स्तुति इस प्रकार है :

**सर्वेषामघहन्तारं ध्यानगम्यं जटाधरम्।**
**वाराणसीपुरीमध्ये वसन्तं मोक्षदायिनम्।**
**विश्वनाथं च वागीशं वेदवेदान्तपारगम्।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम्॥**

*'सर्व लोगों के पाप को हरनेवाले, ध्यान के द्वारा प्राप्त किये जा सकें ऐसे, जटाधारी, वाराणसी नगरी में निवास करनेवाले, मोक्षदायी, वेद-वेदान्त के मर्मज्ञ, वाणी के ईश्वर, विश्व के नाथ, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वन्दन करता हूँ।'*

## १०. श्री त्र्यम्बकेश्वर

महाराष्ट्र में नासिक पंचवटी से ३० कि. मी. दूर, ब्रह्मा, विष्णु और महेश के प्रतीक स्वरूप छोटे-छोटे तीन लिंगोंवाला ज्योतिर्लिंग त्र्यम्बकेश्वर का मंदिर आया हुआ है। सिंह राशि में गुरु आता है तब यहाँ बड़ा कुंभमेला लगता है। गौतम ऋषि की तपस्या से गोदावरी माता नदी के स्वरूप में प्रकट हुईं और भगवान शंकर ने इस स्थान में स्थायी निवास किया।

इसका स्तुतिगान इस प्रकार है :

**स्त्रीहत्यापवादेन व्यथितं गौतमं मुनिम्।**
**घोषयितुं च निष्पापं प्रकटीभूतमीश्वरम्।**
**त्र्यंबकेश्वरमादीशं त्रयीशं त्रिपुरान्तकम्।**
**चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम्॥**

*'स्त्रीहत्या के झूठे आरोप से व्यथित बने हुए गौतम मुनि को निष्पाप घोषित करने के लिए प्रकट हुए प्राणिमात्र के ईश्वर को, त्रिपुर नामक राक्षस का नाश करनेवाले, तीनों लोकों के आदि ईश्वर भगवान त्र्यम्बकेश्वर को, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वन्दन करता हूँ।'*

## ११. श्री केदारनाथ

हिमालय में बद्रीनाथ और केदारनाथ के दो मुख्य तीर्थ हैं। पहले केदारनाथ के दर्शन करने के बाद ही बद्रीनाथ की यात्रा का फल मिलता है।

केदारनाथ का लिंग नर-नारायण सम्मिलित है। हिमालय के केदार पर्वत पर विष्णुजी के अवतार नर-नारायण ने शिवजी की तपस्या की। उन पर प्रसन्न होकर भगवान शंकर यहाँ ज्योतिर्लिंग के स्वरूप में स्थायी बने।

केदारनाथ का शिवलिंग बर्फ का बना हुआ है। उस पर यात्री लोग घी का लेपन करते हैं। पहाड़ों के बीच आये हुए केदारनाथ की यात्रा कठिन चढ़ाईवाली है।

इसकी स्तुति इस प्रकार है :

केदारालंकृतं शर्वं नरनारायणस्तुतम् ।
तपस्वीनां प्रियं कर्तुं वसन्तं तत्र सर्वदम् ।
चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम् ॥

*'केदार पर्वत को सुशोभित करनेवाले, नर-नारायण के द्वारा स्तुति किये जानेवाले शिव को, तपस्वियों का कल्याण करने के लिए वहाँ सदैव निवास करनेवाले, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वन्दन करता हूँ।'*

## १२. श्री घुश्मेश्वर

महाराष्ट्र में मनमाड़ से ६६ कि. मी. दूर, दोलताबाद से १२ कि. मी. के अन्तर पर यह तीर्थधाम आया हुआ है।

देवगिरि पर्वत की तलहटी में सुधर्मा नामका एक ब्राह्मण रहता था। उसको सुदेहा नाम की वन्ध्या पत्नी थी। सुदेहा के आग्रह से सुदेहा की बहन घुश्मा के साथ सुधर्मा ने दूसरी शादी की। घुश्मा को एक पुत्र हुआ। घुश्मा शिवभक्त थी। वह हररोज १०१ शिवलिंग बनाकर उनकी पूजा किया करती थी। पुत्र बड़ा हुआ तब उसकी शादी करवाई। सुदेहा को ईर्ष्या हुई और एक रात्रि में उसने पुत्र की हत्या करके उसका शव उस तालाब में डाल दिया जिसमें घुश्मा हररोज शिवलिंगों का विसर्जन करती थी।

प्रातःकाल में जब घुश्मा शिवपूजन कर रही थी तब पुत्रवधू ने उसे अपने पति के मृत्यु के समाचार दिये। घुश्मा चुप रही। जब वह शिवलिंगों का विसर्जन करने तालाब पर गई तब भोलेनाथ की कृपा से उसका पुत्र जीवित होकर बाहर निकला। वहाँ भगवान शंकर प्रकट हुए और सुदेहा को मारने के लिए त्रिशूल उठाया। तब घुश्मा ने क्षमायाचना की और भगवान शिव शान्त हुए। उन्होंने घुश्मा की प्रार्थना से वहाँ स्थायी निवास किया जो घुमेश्वर के नाम से प्रख्यात हैं।

इस ज्योतिर्लिंग का स्तुतिगान इस प्रकार है :

घुश्मापुत्रस्य दैत्यस्य मृत्युपाशविमोचकम्।
अद्रिकंदरगं शंभुं मिलापुरनिवासिनम्।
वरेण्यं वरदं विश्वतापत्रयविनाशकम्।
चन्द्रमौलीश्वरं वन्दे शरण्यं सर्वदेहीनाम्॥

*'घुश्मा के पुत्र को मृत्यु के पाश से मुक्त करनेवाले, एलोरा की गुफा में तथा मिलापुर में निवास करनेवाले शंभु को, सबको इच्छित वरदान देनेवाले, विश्व के तीनों तापों को हरनेवाले, सर्व देहधारियों के शरण्य भगवान चन्द्रमौलीश्वर को मैं वन्दन करता हूँ।'*

इस प्रकार बारह ज्योतिर्लिंग प्रसिद्ध हैं। उनके पावन दर्शन, पूजन, अर्चन से मनुष्य को शीघ्र मोक्षप्राप्ति होती है।

*

## ॥ द्वादश ज्योतिर्लिंगानि ॥

**सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।**
**उज्जयिन्यां महाकालमोंकारममलेश्वरम्॥**
**परल्यां वैद्यनाथं च डाकिन्यां भीमशंकरम्।**
**सेतुबन्धे तु रामेशं नागेशं दारुकावने॥**
**वाराणस्यां तु विश्वेशं त्र्यंबकं गौतमीतटे।**
**हिमालये तु केदारं घुश्मेशं च शिवालये॥**
**एतानि ज्योतिर्लिंगानि सायं प्रातः पठेन्नरः।**
**सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति॥**

सौराष्ट्र में भगवान सोमनाथ, श्रीशैल पर्वत पर मल्लिकार्जुन, उज्जयिनी में भगवान महाकाल, ओंकारेश्वर तथा अमलेश्वर, परली में भगवान वैद्यनाथ, डाकिनी में भगवान भीमशंकर, सेतुबन्ध पर भगवान रामेश्वर, दारुकावन में भगवान नागेश्वर, वाराणसी में भगवान विश्वनाथ, गौतमी के तट पर भगवान त्र्यम्बकेश्वर, हिमालय में भगवान केदारनाथ और महाराष्ट्र में भगवान घुश्मेश्वर..... इन ज्योतिर्लिंगों का जो पुरुष सायं प्रातः स्मरण - पठन करता है उसके सात जन्मों में किये हुए पाप इस स्मरण से नष्ट हो जाते हैं।

**जिनको परमार्थ में आगे बढ़ना हो उन्हें अपना हृदय हमेशा शुद्ध रखना चाहिये। किसी के साथ बुरा व्यवहार नहीं करना चाहिये। किसी दिल को ठेस पहुंचाने से उसमें से आह निकलती है जो हमारे पुण्यों को नष्ट करती है।**

# गौरवमयी उज्जयिनी

भारतवर्ष की सप्तपुरियों में श्रेष्ठ, भूत-भावन त्रिशूलपाणि महाकालेश्वर की पावन तीर्थ-स्थली, महर्षि सान्दीपनि की पवित्र आश्रम-स्थली, जगतगुरु भगवान श्रीकृष्ण की अनुपम शिक्षा-स्थली, भगवान महावीर की पावन तपस्या-स्थली, श्रृंगार-नीति-वैराग्य-शतकत्रयकार योगीराज भर्तृहरि की पवित्र योग एवं साधना-स्थली, प्रजावत्सल महाराजा विक्रमादित्य एवं राजा भौज की अनोखी राजस्थली, कवि-कुलगुरु महाकवि कालिदास की रसमय काव्य-स्थली एवं प्रियदर्शी सम्राट अशोक की प्रसिद्ध कर्म व धर्म-स्थली उज्जयिनी प्राचीन काल से ही धार्मिक, पौराणिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, साहित्यिक एवं वैज्ञानिक विषयों की गतिविधियों की विश्व-विख्यात केन्द्र -स्थली रही है।

पुराणों, उपनिषदों एवं ब्राह्मण ग्रंथों में उज्जयिनी का वर्णन भरा पड़ा है। आरण्यक, उपनिषद एवं स्कंदपुराण में इसका विशद वर्णन किया गया है। पुराणों में यहाँ चौरासी शिवलिंगों के नामों का उल्लेख मिलता है। इसके अतिरिक्त आठ भैरव, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, छः विनायक तथा २० मातृदेवियों के नाम मिलते हैं। अवन्ती के निकट माहिष्मती के हैहेयों का वर्णन अथर्ववेद में मिलता है। महर्षि वाल्मीकि ने भी इसका वर्णन किया है। महाभारत काल में भी इसके प्रसंग आते हैं। यहाँ के विन्द और अनुविन्द नामक राजाओं ने महाभारत के युद्ध में एक-एक अक्षौहिणी सेना लेकर कौरवों की ओर से युद्ध किया था। इस युद्ध में अनुविन्द अर्जुन द्वारा मारा गया था।

**मेधावी, प्रतिभासंपन्न सरस्वती से कृत नामक पुत्र हुआ। १७ वर्षों के बाद कृत ने सातवाहनों की सहायता से शकों को पराजित करके राजा विक्रमादित्य के नाम से उज्जयिनी में ६० वर्षों तक शासन किया। इस महान सम्राट ने अवन्तिका को केन्द्र बनाकर मालवगढ़ की परम्परा को सुप्रतिष्ठित किया।**

## महर्षि सान्दीपनि का गुरुकुल

भारत के शैक्षणिक मानचित्र में उज्जैन का नाम सर्वोपरि रहा है। यहाँ महर्षि सान्दीपनि के गुरुकुल में स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने आकर विद्यार्जन किया। श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध में आता है कि :

**अथो गुरुकुले वा समिच्छन्तानुवजग्मतुः।**
**काश्यं सान्दीपनि नाम ह्यवन्तिपुरवासिनम्॥**

मथुरा-वृन्दावन से काशी निकट है। अतः श्रीकृष्ण का उज्जयिनी में अध्ययन करना इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि उस काल में उज्जैन बहुत ही अग्रणी रहा होगा।

आगे ३५-३६ श्लोक में लिखा है कि श्रीकृष्ण और बलराम ने मात्र ६४ दिनों में ही सभी विद्या और ६४ कलाओं का अध्ययन कर लिया था। ६४ कलाओं में विज्ञान से सम्बद्ध अनेक विषय आ जाते हैं, अतः उस काल में विज्ञान की शिक्षा की दृष्टि से भी उज्जैन महत्त्वपूर्ण स्थान रहा होगा।

इतिहास में उल्लेख आता है कि ग्यारहवीं शताब्दी में यहाँ काव्यकारों की परीक्षा होती थी। सम्राट अशोक, चन्द्रगुप्त मौर्य, शूद्रक, हरिश्चन्द्र और कवि कालिदास जैसे महान व्यक्तियों ने परीक्षाएँ दीं थीं। अनेक ग्रंथों का निर्माण यहीं हुआ। प्रसिद्ध राजतरंगिनी, कथा सरित्सागर के अनेक पृष्ठ उज्जैन के स्वर्णिम गौरव-गाथाओं से अंकित हैं। महाकवि बाण की अमर कथाकृति 'कादम्बरी' तो आदि से अन्त तक अवन्ति की उज्ज्वल, भव्य एवं वैभवशाली कीर्ति से भरी है।

विदेशों से आनेवाले यात्री अलबेरुनी, हुएनसांग, सुगमुन, हाल्मी, बर्नियर, हिमशेलर आदि विदेशियों ने भी अपनी पुस्तकों में उज्जयिनी का भावपूर्ण वर्णन किया है।

## महापराक्रमी सम्राट विक्रमादित्य

इतिहास-प्रसिद्ध सम्राट विक्रमादित्य की राजधानी भी उज्जैन ही थी। राजनीति और सेना संबंधी महायोग्यता रखनेवाले महाराजा विक्रमादित्य आदर्श शासक, न्यायप्रेमी, प्रजावत्सल, वीर, तेजस्वी, कला, विद्या एवं संस्कृति के महान संरक्षक थे। विक्रमादित्य में लौकिक गुणों के साथ अलौकिक गुण भी थे जिनका वर्णन वैतालपच्चीसी और सिंहासन-बत्तीसी में आता है। 'बृहत-कथा' में भी उनके चमत्कारिक कार्यों का उल्लेख है। मेरुतुंग की 'थिरावली' और जैनों के 'कालकाचार्य कथा' अनुसार सम्राट विक्रमादित्य ने ईसा से ५७ वर्ष पूर्व शकों पर विजय प्राप्त की थी। इस विजय-स्मृति के रूप में विक्रमी-संवत का आरंभ किया था। जैन किंवदन्तियों के अनुसार विक्रम के पिता राजा महेन्द्रसेन के राजकाल में एक जैन आचार्य कालक अपनी मेधावी एवं सुन्दर वाक्चातुर्य-प्रवीण बहन सरस्वती को लेकर चातुर्मास के लिए उज्जयिनी आये। राजा उस पर अनुरक्त हो गया और उसने उसका हरण कर लिया। कालिकाचार्य के बहुत समझाने पर भी न मानने के कारण क्रोध में उन्होंने सिंध के शहानुशाही शकराज को आमंत्रित कर महेन्द्रसेन को हराया पर वह रानी सरस्वती को लेकर दक्षिण के सातवांहनों के आश्रय में चला गया। वहीं उसे मेधावी, प्रतिभासंपन्न सरस्वती से कृत नामक पुत्र हुआ। १७ वर्षों के बाद कृत ने सातवाहनों की सहायता से शकों को पराजित करके राजा विक्रमादित्य के नाम से उज्जयिनी में ६० वर्षों तक शासन किया। इस महान सम्राट ने अवन्तिका को केन्द्र बनाकर मालवगढ़ की परम्परा को सुप्रतिष्ठित किया। उनकी राजसभा में अपने अपने विषय के मूर्धन्य विश्वप्रसिद्ध नौ महान उद्भट विद्वान नवरत्नों के रूप में राजदरबार को अलंकृत करते थे। यथा—

**धन्वन्तरिक्षपणकामरसिंहशंकु-**
**बेतालभट्टघटकर्परःकालिदासाः ।**
**ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां**
**रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य ॥**

ये नौ रत्न आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, बैतालभट्ट, घटकर्पर, महाकवि कालिदास, ज्योतिषाचार्य वराहमिहिर और वररुचि थे।

विक्रमादित्य के इन नरशार्दूल रत्नों के कारण मालव की संस्कृति सैकड़ों वर्षों से जगमगाती रही है एवं जगमगाती रहेगी। विश्व के कलाक्षेत्रों को चकाचौंध कर देनेवाला 'शाकुन्तलम्' नाटक इन्हीं नवरत्नों में से कविश्रेष्ठ कालिदास ने निर्मित करके अवन्तिका का गौरव बढ़ाया था। अवन्तिका का वैभव संपूर्ण भारतवर्ष को ज्योतिर्मय कर देनेवाला बन गया था। इस प्रकार मालव की इस वैभवशाली मनोहारी भूमि का स्वयं सरस्वती ने अपने कलामय कमनीय वरद् हस्तों से सुभग श्रृंगार किया।

## भारतीय पारद रसायन के पितामह व्याद्रि

महाराजा विक्रमादित्य के ही समकालीन व्याद्रि नामक महान रासायनिक हो चुके हैं। भारतवर्ष का यह दुर्भाग्य ही रहा है कि रसायणशास्त्र के इतिहास से संबंधित देश-विदेश के ग्रंथों में उज्जयिनी के इस रससिद्ध आचार्य व्याद्रि को समुचित स्थान प्राप्त नहीं हो पाया। बहरहाल ११वीं सदी में भारत आये हुए विख्यात अरबी विद्वान अलबेरुनी ने अपनी प्रसिद्ध यात्रा में रसायणज्ञ व्याद्रि की प्रशंसा में काफी कुछ लिखा है। एक लोक-कथानुसार आचार्य व्याद्रि ने भेषज संस्कार ग्रंथ लिखा था और अर्थाभाव के कारण नदी में फेंक दिया था। वहाँ से एक वेश्या ने उठा लिया और व्याद्रि को बहुत धन देकर औषधियाँ तैयार करवाईं थीं। अलबेरुनी ने लिखा है कि एक पदार्थ ऐसा तैयार किया गया था कि जो शरीर पर मल लेने मात्र से व्याद्रि और वह स्त्री दोनों वायु में उड़ने लगे थे। यह हाल स्वतः विक्रमादित्य ने अपनी आँखों से देखा था।

सत्ताईस वरेण्य रससिद्धों की श्रृंखला में आचार्य व्याद्रि का पुण्य स्मरण करते हुए रसरत्न समुच्चय के कर्ता नागभट ने लिखा है :

**इन्द्रदो गोमुखश्चेत कम्बलि व्याद्रिखेत्।**
**सप्तविंशति संख्यकाः रससिद्धिप्रदायकाः ॥**

पारिणी, सोमदेव, राजशेखर, नागेश आदि प्रसिद्ध विद्वानों के सुप्रसिद्ध ग्रंथों में एवं शब्दकल्पद्रुम आदि विख्यात ग्रंथों में रससिद्ध व्याद्रि के संबंध में ससम्मान उल्लेख है।

## चिकित्सा-चुड़ामणि श्री धन्वन्तरि

जो नवरत्न चक्रवर्ती सम्राट विक्रमादित्य के वैभवशाली राजदरबार की शोभावृद्धि करते थे उनमें सर्वप्रथम स्थान पर चिकित्सा चुड़ामणि आयुर्वेदाचार्य श्री धन्वन्तरि की गणना होती थी। निश्चित ही यह विक्रम-धन्वन्तरि समुद्र-मन्थन से संबंधित धन्वन्तरि से भिन्न हैं। आयुर्वेद की परम्परा में एकाधिक धन्वन्तरियों का उल्लेख उपलब्ध होता है। संभव है धन्वन्तरि उपाधि के साथ ये चिकित्सा-विज्ञान के मर्मज्ञ हुए हों और विक्रम के नवरत्नों में सुशोभित हुए हों। विद्वानों के मतानुसार धन्वन्तरि उस विद्वान वैद्य को कहा जाता था जो प्रत्येक व्याधि की तीन सौ भिन्न औषधियाँ या चिकित्साएँ जानता था।

वैक्रम धन्वन्तरि के ग्रंथ 'धन्वन्तरि निघन्टु' में धन्वन्तरि घृत, पाशुपतराय, मृत्युञ्जय लोह, रसराजेन्द्र एवं रसांग-गुग्गुल प्रसिद्ध हैं। अन्य प्राप्त ग्रंथ 'विद्याप्रकाशचिकित्सा', 'रोग-निदान', 'वैद्यकभास्करोदय', 'वैद्य चिन्तामणि', 'चिकित्सा-सार संग्रह' ये धन्वंतरि-पंचकम् कहलाते हैं।

लोकगाथा एवं किंवदन्ती से ज्ञात होता है कि अवन्तिका के ये धन्वन्तरि प्रतिवर्ष औषधियों के संग्रह हेतु आयुर्वेद के सिद्धांतानुसार शरद ऋतु में कार्तिक मास में उज्जयिनी के समीप के नगर महिदपुर जाया करते थे। वहाँ पर एक महीना निवास करके, वहाँ की पहाड़ी पर और क्षेत्र में उत्पन्न होनेवाली औषधियों का संग्रह करते थे। उनके निवास की अवधि में बहुसंख्या में उस क्षेत्र के निवासी उनकी चिकित्सा का लाभ उठाते थे। महिदपुर नगर से ४ कि. मी. दूरी पर बैजनाथ ग्राम में एक अति प्राचीन 'धनतर' नामक मंदिर में अर्ध पुरुषाकार मूर्ति हाथ में कलश लिए स्थापित है। उक्त स्थल पर श्री धन्वन्तरि के निवास करने की स्मृति में प्रतिवर्ष कार्तिक मास के प्रत्येक सोमवार को नगर-निवासी सपरिवार यहाँ दर्शन के लिये जाया करते हैं।

## ज्योतिषाचार्य वराहमिहिर

प्राचीन ज्योतिषाचार्यों में विद्यानुरागी विक्रमादित्य के नवरत्नों में गिने जाने वाले श्री वराहमिहिर का विशिष्ट स्थान है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक आर्यभट्ट के पश्चात् ये ही एक ऐसे उद्भट विद्वान हुए हैं जिन्हें विस्मृत नहीं किया जा सकता है। संसार के गौरव, आचार्य वराहमिहिर ही सर्वप्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने पृथ्वीमंडल में 'अहोरात्र' की व्याख्या की है। अपने अमर ग्रंथ 'बृहज्जातक' के अन्त में उन्होंने लिखा है कि अवन्ति के पास कायथा गाँव में भगवान सूर्य की कृपा से तथा अपने पिता आदित्यदास से ज्ञान प्राप्त कर रोचक 'होरा' ग्रंथ की रचना की है जो कि चौबीस घंटों में होनेवाली शुभाशुभ घटनाओं को व्यक्त करने का सामर्थ्य रखता है। पृथ्वी के आकार-प्रकार पर पूर्वकालीन विद्वानों ने अपने ग्रंथों में 'कपित्थ आकाराय पृथ्वी' कहकर दृढ़ पुष्टि की है।

आचार्य वराहमिहिर ने बहुत ही सूक्ष्मतम खोज-बीन करके प्रमाणित किया है कि कँटीले, दुग्धवाले, फलधारी-फूलधारी तथा सुगंधित पत्तोंवाले पेड़-पौधों से ज्योतिष का क्या व कितना संबंध है। यह भी विश्व को वराहमिहिर की एक मौलिक देन है। पशु-पक्षियों की आयु पर विशेष रूप से ज्योतिष का अध्ययन भी वराहमिहिर की ही देन है। पंचसिद्धान्तिका, बृहत्संहिता, बृहज्जातक, विवाह जातक, यात्राग्रंथ आदि उनके महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं। उन्होंने पूर्व यूनानी, मिश्र व अरब राष्ट्रों की यात्रा कर लुप्त ज्योतिषशास्त्र की पुनस्स्थापना की।

भारत-यात्रा पर आये अरबी विद्वान अलबेरुनी ने अपनी पुस्तक में प्रकाश-परावर्तन, पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति आदि विषयों में वराह-मिहिर की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उनका 'बृहत-संहिता' ग्रंथ माप-तोल, रत्न-परीक्षा, पशु-विज्ञान, काम-शास्त्र, वास्तु-विभा, प्रतिमा-विज्ञान, प्रासाद-विज्ञान, विस्फोटों द्वारा शिला-विदारण का विज्ञान, भूगोल, खगोल, इन्द्रधनुष, भूकम्प, उल्कापात, ऋतु-विज्ञान आदि संबंधी गहन एवं विशद जानकारियों से परिपूर्ण हैं। वराहमिहिर जैसे बहुमुखी प्रतिभावान विद्वान को पाकर मालव-उज्जयिनी एवं समग्र भारत-राष्ट्र धन्यता अनुभव करता है।

## महाकवि कालिदास

साहित्य एवं कलाप्रेमी महाराज विक्रम के महत्त्वपूर्ण रत्न कविकुलगुरु महाकवि कालिदास हमारे राष्ट्र एवं

(अनुसंधान पेज ३२ पर)

# उज्जयिनी के दर्शनीय स्थल

भारत के मानचित्र में २३.९ उत्तर अक्षांश तथा ७५.४३ पूर्व रेखांश पर तीर्थश्रेष्ठ उज्जयिनी के दर्शन हो जाते हैं। यह पवित्र नगरी समुद्र सतह से १६५८ फीट की ऊँचाई पर मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल से दक्षिण-पश्चिम करीब १९० कि. मी. की दूरी पर पुण्यसलिला क्षिप्रा के मनोहर पूर्वी तट पर बसी हुई है।

क्षिप्रातट

यह अवन्ति नगरी अपने विभिन्न तालाबों, नदी में घुमावों, आकारों-प्राकारों एवं परिवर्तों के कारण अपने नागरिकों का योग्य संरक्षण करती थी, अतः अवन्तिका कहलाई। सुवर्णकलशमण्डित शिखरों के कारण कनकश्रृंगा, सर्वत्र फैले कमलयुक्त तालाबों के कारण पद्मावती, नदी-तट क्षेत्र में फैली कुशा घास के कारण कुशावती, भव्य अभूतपूर्व नगर रचना के कारण विशाला तथा प्रत्येक कल्प में स्थायी स्वरूप के कारण प्रतिकल्पा कहलाई। भगवान शिव ने दूषणासुर का वध कर उसका वैभव सर्वस्व हरण कर उसका नाम उत्-जयिनी याने उज्जयिनी रखा।

तो आइये, हम सात पुरियों में श्रेष्ठ इस नगरी का अवलोकन करें।

## श्री महाकालेश्वर

भगवान महाकाल का सुंदर आकर्षक एवं विशाल मंदिर यहाँ कोट मुहल्ले में स्थित है। मंदिर में प्रवेश के लिए एक भव्य विशाल द्वार, लाखों की लागत से बना विशाल सभा-मंडप, मंदिर का वातानुकूलित भीतरी भाग एवं सुंदर निर्गम द्वार का निर्माण दर्शनीय है।

मंदिर एक विस्तृत क्षेत्र में घिरा हुआ है तथा इस क्षेत्र में ओंकारेश्वर, स्वप्नेश्वर, वृद्ध कालेश्वर, आदिकल्पेश्वर एवं सप्तर्षि गण आदि अनेक शिवालय विद्यमान हैं। मंदिर के पश्चिम भाग में कोटितीर्थ नामक एक सुंदर जलाशय है तथा चारों ओर बहुत-सी शिव-प्रतिमाएँ हैं। मंदिर की दिनचर्या प्रातः ४ बजे की भस्म-आरती से प्रारंभ होती है। इसके बाद ८ बजे, दिन के १२ बजे तथा सायंकाल ७ बजे भगवान का आरती-पूजन होता है। प्रातःकाल की भस्म-आरती तो शान्त वातावरण में एक विशेष आनन्द उत्पन्न कर देती है।

अग्निपुराण के अनुसार यह सर्वोत्तम तीर्थ माना गया है। इसके दर्शन से अकाल मृत्यु टल जाती है एवं भक्त को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

## श्री बड़े गणेशजी

महाकालेश्वर के उत्तर द्वार से निकलते ही बड़े गणेश का मंदिर दिखाई देता है। गणेशजी की प्रतिमा विशाल, सुन्दर, सुडौल होने के साथ-साथ कलात्मक भी है। इस मंदिर में अनेक देवी-देवताओं की मूर्तियाँ भी प्रतिष्ठित हैं।

## हरसिद्धि देवी

गणेशजी के मंदिर से निकलकर पश्चिम की तरफ

दृष्टि डालते हैं तो दीपमालिकाओं के साथ भगवती माँ हरसिद्धि का मंदिर दिखाई देता है। गणपति एवं हरसिद्धि का मध्य भाग किसी जमाने में पुराण-प्रसिद्ध रुद्र सागर रहा है। शिवपुराण के अनुसार यहाँ देवी की प्रतिमा नहीं है, सती के शरीर का एक अंश हाथ की कोहनी मात्र है। तांत्रिकों के अनुसार यह मातृ-पीठ स्थान है। राजा विक्रम की ये आराध्या देवी रही हैं। अनेक वर्ष तक राजा ने यहाँ तप किया था। कहा जाता है कि विक्रमादित्य ने देवी को प्रसन्न करने के लिए ११ बार अपने मस्तक की बलि चढ़ाई थी, पर बार-बार सिर आ जाता था। बारहवीं बार सिर नहीं आया। इस प्रकार विक्रम का शासन पूर्ण हो गया। अश्विन और चैत्री नवरात्रि के अवसर पर मंदिर में मेला-सा लग जाता है और दोनों दीपमालिकाएँ विशाल स्वर्णस्तंभ-सी प्रतीत होती हैं।

## क्षिप्रातट

हरसिद्धि के पश्चिम से राम सीढ़ी उतरकर क्षिप्रातट पर पहुँचा जाता है। क्षिप्रा एक महान पवित्र नदी है। इसमें स्नान-दान के पुण्य का वर्णन अवन्ति खण्ड में भरा पड़ा है। इसके तटवर्ती २८ प्रमुख तीर्थ हैं। वैशाख मास एवं कार्तिक पूर्णिमा पर प्रतिवर्ष तथा बारह वर्ष में सिंहस्थ के अवसर पर दोनों तट पर स्नानार्थियों का विशाल मेला लगता है।

## श्री गोपाल मंदिर

मुख्य बाज़ार छत्रीचौक में यह मंदिर स्थित है। गर्भगृह और उस पर शिखर संगमरमर का है। मंदिर के अंदर का द्वार बहुमूल्य रत्न पन्ना का बना हुआ है। बाहर के किवाड़ चाँदी की चोखट में जड़े हुए हैं।

## श्री गढ़ कालिका देवी

गोपाल मंदिर से सीधे डेढ़ मील की दूरी पर गढ़ क्षेत्र में महाकवि कालिदास की आराध्या देवी महाकाली का मंदिर है। गर्भगृह में महाकाली की मूर्ति प्रतिष्ठित है जिसकी मुद्रा उग्र और भयानक-सी दिखती है। समीप ही चामुंडा देवी की मूर्ति और गिरिरुद्र का लिंग स्थापित है। प्राचीन मंदिर जीर्णोद्धार से अब नवीन भव्य सभामंडप के साथ आकर्षक बन गया है।

## भर्तृहरि गुफा

कालिका मंदिर के निकट, क्षिप्रा तट के ऊपरी भाग में भर्तृहरि की प्रसिद्ध गुफा है। अपने भाई विक्रमादित्य को राज्य देकर नाथ सम्प्रदाय की दीक्षा ग्रहण कर इस गुफा में उन्होंने योगसाधना की थी। गुफा से थोड़ी दूरी पर एक टीले पर पीर मच्छन्दर की कब्र नाम से प्रसिद्ध आचार्य मत्स्येन्द्रनाथ की समाधि बनी हुई है जो हिन्दू-मुसलमान दोनों के लिए पूजनीय है।

## श्री कालभैरव

शहर से ढाई-तीन मील की दूरी पर क्षिप्रा के पश्चिमोत्तर तट पर भैरव गढ़ में राजा भद्र द्वारा निर्मित मंदिर है। काले पाषाण से बना इसका भव्य द्वार दर्शनीय है। संकुचित द्वारवाली छोटी गुफा में भैरव की प्रतिमा विराजमान है। जनश्रुति है कि कालभैरव की मूर्ति के मुँह में कोई छिद्र नहीं है फिर भी मदिरायुक्त पात्र उनके मुँह में लगाने से रिक्त हो जाता है।

## सिद्धवट

भैरवगढ़ के निकट क्षिप्रा तट पर यह पवित्र एवं ऐतिहासिक स्थल स्थित है। प्रयाग में अक्षयवट, नासिक में पंचवट, वृंदावन में वंशवट तथा गया में गयावट का जो महत्त्व है वही उज्जैन में सिद्धवट का है। उत्तरकर्म, नागबलि, नारायणबलि, श्राद्ध एवं तर्पण आदि के लिए इस स्थान का विशेष फल कहा है।

## सांदीपनि आश्रम अंकपात

सांदीपनि आश्रम भारत की गौरवगाथा का एक स्वर्णिम पृष्ठ है। यही वह स्थल है, जहाँ गीता के अमर गायक योगेश्वर श्रीकृष्ण ने बलराम एवं सुदामा सहित महर्षि सांदीपनि से शिक्षा-दीक्षा ली थी। इस स्थल पर गोमती कुण्ड है जहाँ भगवान अपनी पट्टी धोया करते थे। इसलिए यह क्षेत्र अंकपात नाम से विख्यात है। वैष्णव संप्रदाय के महान आचार्य महाप्रभु वल्लभाचार्य की ५३ वीं बैठक यहाँ हुई। अत: वल्लभ संप्रदाय के भक्तों का यह तीर्थ-स्थल है।

## मंगलनाथ मंदिर

अंकपात से कुछ आगे जाने पर महामंगलेश्वर का सुंदर मंदिर बना हुआ है। पुराण अनुसार अवन्तिका को मंगलग्रह की जन्मभूमि कहा जाता है। मंदिर से नीचे क्षिप्रा पर सुंदर घाट बना हुआ है। प्रति मंगलवार, सोमवती अमावस्या तथा वैशाखी पूर्णिमा को यहाँ दर्शनार्थियों का तांता लगा रहता है।

## कालियादेह महल

भैरवगढ़ के किले के निकट मार्ग से यहाँ पहुँचते हैं। इस भव्य प्रासाद के समीप क्षिप्रा दो धाराओं में ऐसे विभक्त हो जाती है मानो दो बाँहों में महल को समेट लिया हो। अवन्ति-माहात्म्य के अनुसार यहाँ ब्रह्मकुण्ड और सूर्यनारायण मंदिर रहा है। सोलहवीं सदी में इसे सुल्तान खिलजी ने तुड़वाकर बड़े महल में परिवर्तित कर दिया। मुख्य कुण्ड तोड़कर छोटे-छोटे ५२ कुण्ड बनवाये जिसमें क्षिप्रा की धारा बहती है, एवं मनोहर दृश्य उपस्थित कर देती है।

## वेधशाला या यन्त्रमहल

ज्योतिष की दृष्टि से यह ऐतिहासिक महत्त्व का स्थल है। २६० वर्ष पूर्व राजा जयसिंह ने इसे ग्रहों की यथार्थ गणना कार्य हेतु बनाया था। इसमें सम्राट यन्त्र, दिगंश यन्त्र, नाड़ोबलय यन्त्र एवं भिति यन्त्र प्रमुख हैं।

## चिन्तामणि-गणेश

क्षिप्रा से ५ कि. मी. दूर मंगलमूर्ति चिन्तामणि गणेशजी की प्राचीन मूर्ति है। इच्छापूर्ति एवं चिन्ताहरण के लिए यह स्थान संपूर्ण मध्यप्रदेश में प्रसिद्ध है। चैत्रमास में प्रत्येक बुधवार को यहाँ मेला लगता है।

*

## उज्जैन जंक्शन से आने-जाने वाली रेलगाड़ियाँ

### बड़ी लाईन की गाडियाँ

| | | आने का समय | जाने का समय |
|---|---|---|---|
| ८९ डाउन | भोपाल पैसेन्जर | २३.४० | ००.२० |
| ९८१ डाउन | कोचिन एक्सप्रेस (प्रति शनि) | ०६.४५ | ०७.०० |
| १६५ डाउन | साबरमती एक्सप्रेस | ०५.३५ | ०६.०० |
| ८५ डाउन | भोपाल पैसेन्जर | १०.५० | ११.१० |
| १६१ डाउन | बाम्बे-इन्दौर एक्सप्रेस | ०८.११ | ०८.१६ |
| १४१ डाउन | नागदा-गुना पैसेन्जर | ११.५० | १२.२० |
| ८७ डाउन | नागदा-इन्दौर पैसेन्जर | १६.४५ | १७.२५ |
| ३३ डाउन | इन्दौर-बिलासपुर एक्सप्रेस | १७.१० | १७.३५ |
| १८७ डाउन | मालवा एक्सप्रेस | १६.४० | १६.५५ |
| १६९ डाउन | राजकोट-भोपाल एक्सप्रेस | ०४.३० | ०४.५५ |
| १४९ डाउन | नागदा-उज्जैन पैसेन्जर | ००.१० | ००.०० |
| ९७१ डाउन | क्षिप्रा एक्सप्रेस हावड़ा-इन्दौर (प्रति गुरुवार) | ०१.४० | ०२.१० |
| ९८२ अप | अहिल्या एक्स. इन्दौर-कोचिन (शनि) | १५.३० | १५.४५ |
| ९० अप | भोपाल-इन्दौर पैसेन्जर | ०३.४० | ०५.५० |
| १६८ अप | मालवा एक्सप्रेस | १०.३० | १०.४५ |
| ८८ अप | इन्दौर-नागदा पैसेन्जर | १०.५० | ११.१५ |
| ३४ अप | बिलासपुर-इन्दौर एक्सप्रेस | ११.०५ | ११.३० |
| ८६ अप | भोपाल-रतलाम | १७.२० | १७.४५ |
| १४२ अप | गुना-नागदा | १४.५० | १५.१० |
| १६६ अप | साबरमती एक्सप्रेस | २०.०० | २०.३० |
| १६२ अप | इन्दौर-बम्बई एक्सप्रेस | २२.०० | २२.३० |
| ९७० अप | भोपाल-राजकोट एक्सप्रेस | २३.२५ | २३.५० |
| १५० अप | उज्जैन-नागदा एक्सप्रेस | ००.०० | ०६.०० |
| ९७२ अप | क्षिप्रा एक्स. (इन्दौर-हावड़ा) (प्रति गुरुवार) | २१.४० | २२.०० |

### मीटर गेज रेन्ज

| | | जाने का समय | जाने का समय |
|---|---|---|---|
| ९४ डाउन | महू-उज्जैन पैसे. फास्ट | १०.१० | |
| १४६ डाउन | महू-उज्जैन—"— | १२.४० | |
| ९६ डाउन | महू-उज्जैन—"— | १५.०० | |
| १३४ डाउन | फतेहाबाद-उज्जैन पैसेन्जर | १९.१५ | |
| ९८ डाउन | महू-उज्जैन पैसे. फास्ट | २१.२० | |
| ९७ अप | उज्जैन-महू फास्ट | | ०६.१५ |
| १४५ अप | उज्जैन-फतेहाबाद फास्ट | | १०.३० |
| ९३ अप | उज्जैन-महू फास्ट | | १३.१५ |
| १३३ अप | उज्जैन-फतेहाबाद पैसेन्जर | | १७.०५ |
| ९८ अप | उज्जैन-महू | | १९.४० |

## उज्जैन से कुछ प्रमुख नगरों की दूरी

| | | |
|---|---|---|
| इन्दौर | : | ५६ कि.मी. सड़क |
| | | ६५ कि.मी. रेल |
| देवास | : | ३७ कि.मी. सड़क |
| | | ४१ कि.मी. रेल |
| पीथमपुर | : | ८५ कि.मी. सड़क |
| मंदसौर | : | १९१ कि.मी. सड़क |
| | | १८५ कि.मी. रेल |
| माण्डू | : | १४५ कि.मी. सड़क |
| ओंकारेश्वर | : | ११६ कि.मी. सड़क |
| | | १४२ कि.मी. रेल |
| भोपाल | : | १९१ कि.मी. सड़क |
| | | १८५ कि.मी. रेल |
| रतलाम | : | ८१ कि.मी. सड़क |
| | | ९७ कि.मी. रेल |
| नागदा | : | ६० कि.मी. सड़क |
| | | ५६ कि.मी. रेल |

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद सद्गुरुदेव

# संत श्री आसारामजी महाराज की जीवन-झाँकी

**अलख पुरुष की आरसी, साधु का ही देह।**
**लखा जो चाहे अलख को, इन्हीं में तू लख ले॥**

किसी भी देश की सच्ची संपत्ति संत-जन ही होते हैं। वे जिस समय आविर्भूत होते हैं उस समय के जन-समुदाय के लिये उनका जीवन ही सच्चा पथ-प्रदर्शक होता है। एक प्रसिद्ध संत तो यहाँ तक कहते हैं कि भगवान के दर्शन से भी ज्यादा लाभ भगवान के चरित्र सुनने से मिलता है और भगवान के चरित्र सुनने से भी सच्चे संतों के जीवन-चरित्र पढ़ने-सुनने से और भी ज्यादा लाभ मिलता है। वस्तुतः विश्व के कल्याण के लिये जिस समय जिस धर्म की आवश्यकता होती है उसका आदर्श उपस्थित करने के लिये स्वयं भगवान ही तत्कालीन संतों के रूप में नित्य-अवतार लेकर आविर्भूत होते हैं। वर्तमान युग में यह दैवी कार्य जिन संतों द्वारा हो रहा है उनमें लोकलाडीले संत हैं अहमदाबाद के श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ योगीराज पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज।

महाराजश्री इतनी ऊँचाई पर अवस्थित हैं कि शब्द उन्हें बाँध नहीं सकते। जैसे विश्वरूप दर्शन मानव-चक्षु से नहीं हो सकता, उसके लिये दिव्य-दृष्टि ही चाहिये और जैसे विराट को नापने के लिये वामन का नाप बौना पड़ जाता है वैसे ही पूज्यश्री के विषय में कुछ भी लिखना मध्यान्ह के देदीप्यमान सूर्य को दीया दिखाने जैसा ही होगा। फिर भी अंतर में श्रद्धा, प्रेम व साहस जुटाकर गुह्य ब्रह्मविद्या के इन मूर्तिमंत स्वरूप की जीवन-झाँकी कराने का विनम्र प्रयास करते हैं।

सन् १९४१ वि. सं. १९९८ में चैत्र वद ६ के दिन सिंध के नवाब जिल्ले के बेराणी गाँव में नगरसेठ श्री थाऊमल सिरुमलानी के श्रीमंत और पवित्र परिवार में एक अलौकिक बालक का प्रागट्य हुआ। उनका नाम रखा गया आसुमल। जन्म के साथ ही उनके परिवार में कई चमत्कारपूर्ण घटनाएँ घटने लगीं। एक बड़ा सौदागर किसी अगम्य प्रेरणा से वहाँ आया और एक अति मूल्यवान झूला नगरसेठ को भेंट दे गया। साढ़े तीन वर्ष की उम्र में ही इस प्रज्ञावान मेधावी बालक ने स्कूल में सिर्फ एक ही बार एक लम्बी कविता सुनकर कण्ठस्थ करके विद्यार्थियों को एवं अध्यापकों को आश्चर्यचकित कर दिया। उनके कुलगुरु श्री परशुरामजी ने भविष्यकथन किया कि यह बालक आगे चलकर एक महान संत बनेगा और लाखों लोगों का उद्धार करेगा।

**भगवान के दर्शन से भी ज्यादा लाभ भगवान के चरित्र सुनने से मिलता है और भगवान के चरित्र सुनने से भी सच्चे संतों के जीवन-चरित्र पढ़ने-सुनने से और भी ज्यादा लाभ मिलता है।**

सन् १९४७ में कुदरत ने करवट ली। भारत-पाकिस्तान विभाजन में सेठ थाऊमल अपनी सारी धन-संपत्ति, जमीन-जागीर, पशुधन, मानो अपना एक छोटा-मोटा रज़वाड़ा पाकिस्तान में छोड़कर भारत में अहमदाबाद आकर बसे। यहाँ बालक आसुमल के अभ्यास की व्यवस्था मणिनगर के स्कूल में कर दी गई। ब्रह्मविद्या के राही इस बालक को लौकिक विद्या पढ़ने में रुचि नहीं हुई। वे जब भी समय मिलता, पेड़ के नीचे एकांत में जाकर ध्यान-मग्न हो जाते। प्रसन्नता, माधुर्य एवं अन्य अलौकिक गुणों के कारण वे स्कूल में अध्यापकों एवं विद्यार्थियों में लोकप्रिय बन गये।

परिस्थितियाँ अभी कुछ सँभल ही रही थी कि प्रकृति का दूसरा प्रहार हुआ। उनके पिताश्री का स्वर्गवास हो गया। अब कोमल वय के बालक आसुमल को पढ़ाई छोड़कर परिवार के पोषणार्थ बड़े भाई के साथ व्यापार-धंधे में सम्मिलित होना पड़ा। वहाँ भी कुशाग्र बुद्धि एवं साधना के प्रभाव से बड़े भाई को व्यापार में कई आर्थिक लाभ कराये लेकिन खुद को तो केवल आध्यात्मिक धन का अर्जन करने की ही लगन रही।

पिताश्री के निधन के बाद आसुमल की विवेक-संपन्न बुद्धि ने संसार की असारता और परमात्मा ही एकमात्र परम

सार है यह बात दृढ़तापूर्वक जान ली थी। उन्होंने ध्यान-भजन और बढ़ा दिया। दस वर्ष की उम्र में तो अनजाने ही रिद्धि-सिद्धि सेवा में हाजिर हुई थी। लेकिन अगम के प्रवासी वहीं रुकनेवाले नहीं थे। वैराग्य की अग्नि उनके अंतरतम में प्रकट हो चुकी थी।

**जन्म के साथ ही उनके परिवार में कई चमत्कारपूर्ण घटनाएँ घटने लगीं। एक बड़ा सौदागर किसी अगम्य प्रेरणा से वहाँ आया और एक अति मूल्यवान झूला नगरसेठ को भेंट दे गया।**

कुछ बड़े होते ही घरवालों ने उनकी शादी करने की तैयारी की। वे तुरन्त सचेत हो गये और घर छोड़कर चले गये। काफी कोशिश के पश्चात् आखिर घरवालों ने उन्हें खोज ही लिया और तीव्रतम प्रारब्ध के कारण उनका विवाह हो गया। किन्तु आसुमल उस स्वर्ण-बन्धन में रुके नहीं। अपनी सुशील, पवित्र धर्मपत्नी लक्ष्मीदेवी को समझाकर अपने परम लक्ष्य परमात्म-प्राप्ति... आत्म-साक्षात्कार के लिये घर छोड़कर चल दिये।

जंगलों में, पहाड़ों में, गुफाओं में, कन्दराओं में एवं अनेक तीर्थों में घूमे, कंटकाकीर्ण मार्गों पर चले, शिलाओं की शैया में सोये, मौत का मुकाबला करना पड़े ऐसे दुर्गम स्थानों में जाकर उग्र कठोर साधना की। इन सब कड़ी तितिक्षाओं के बाद नैनिताल के जंगल में उन्हें ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरुदेव प. पू. स्वामी श्री लीलीशाहजी महाराज के श्रीचरणों का सान्निध्य प्राप्त हुआ। वहाँ भी कठोर कसौटियाँ हुई। परमात्मा के प्यार में तड़पता हुआ वह परम वीर सब कसौटियाँ पार करके सदगुरुदेव का कृपा-प्रसाद पाने का अधिकारी बन गया। गुरुदेव ने आसुमल को घर में ही ध्यान-भजन करने का आदेश देकर अहमदाबाद वापस भेज दिये। घर तो आये लेकिन जिस सच्चे साधक का आखिरी लक्ष्य सिद्ध न हुआ हो उसको चैन कहाँ?

**चातक मीन पतंग जब पिय बिन नहीं रह पाये।**
**साध्य को पाये बिना साधक क्यों रह जाये॥**

बस, वे घर छोड़कर नर्मदा किनारे जाकर अनुष्ठान में संलग्न हो गये।

एक बार की बात है। नर्मदा नदी के किनारे वे ध्यानस्थ बैठे थे। मध्यरात्रि के समय जोरों की तुफान-आँधी चली। वे उठकर किसी मकान के बरामदे में जाकर बैठ गये और जगत को भुलाकर उसी प्यारे परमात्मा के ध्यान में फिर से डूब गये।

रात बीती जा रही थी। कोई मच्छीमार लघुशंका करने बाहर निकला होगा और इनको यहाँ बैठे देखकर चौंका। इन्हें चोर-डाकू समझकर पूरे मुहल्ले को जगाया। भीड़ इकट्ठी हो गई। उन पर हमला करने के लिए लोग लाठी, भाला, चाकू, छुरी, धारिया आदि लेकर खड़े हो गये। लेकिन...

**'जा को राखे सांइया मार सके न कोई।'**

हाथ में हथियार होने पर भी वे मछुए आसुमल के पास न फटक सके, क्योंकि जिनके पास आत्मशांति का हथियार होता है उनको भला लाठी, भाला, चाकू, छूरीवाले मछुए क्या कर सकते हैं? उस विलक्षण प्रसंग का वास्तविक वर्णन करना असंभव है।

ईश्वर की शांति में डूबने से जन्म-मरण का चक्कर रुक जाता है तो मछुओं के हथियार रुक जायँ और मन बदल जाये इसमें क्या आश्चर्य है?

शोरगुल सुनकर आसुमल का ध्यान टूटा। परिस्थिति का उन्हें खयाल आया। आत्म-मस्ती में मस्त, स्वस्थ शांतचित्त होकर वे खड़े हुए। हमला करने के लिये तत्पर लोगों पर एक प्रेमपूर्ण दृष्टि डालते हुए धीर-गंभीर निश्चल कदम उठाते हुए आसुमल भीड़ को चीरकर बाहर निकल गये। बाद में लोगों को उनके बारे में पता चला तो माफी माँगी और अत्यंत आदर करने लगे।

फिर वे वृज्रेश्वरी अपने एकान्त स्थान में पधारे हुए सद्गुरुदेव प. पू. श्री लीलाशाहजी महाराज के श्रीचरणों में पुनः पहुँच गये। साधना की इतनी तीव्र लगनवाले

**साढ़े तीन वर्ष की उम्र में ही इस प्रज्ञावान मेधावी बालक ने स्कूल में सिर्फ एक ही बार एक लम्बी कविता सुनकर कण्ठस्थ करके विद्यार्थियों को एवं अध्यापकों को आश्चर्यचकित कर दिया।**

अपने प्यारे शिष्य को देखकर सद्गुरुदेव का करुणापूर्ण हृदय छलक उठा। उनके हृदय से बरसते कृपा-अमृत ने साधक की तमाम साधनाएं पूर्ण कर दीं। पूर्ण गुरु ने शिष्य को पूर्ण गुरुत्व में सुप्रतिष्ठित कर दिया। साधक में से सिद्ध प्रकट हो गया। जीव को अपने शिवत्व की पहचान हो गई। उस परम पावन दिन आत्म-साक्षात्कार हो गया। आसुमल में से संत श्री आसारामजी महाराज का आविर्भाव हो गया।

**साधना की इतनी तीव्र लगनवाले अपने प्यारे शिष्य को देखकर सद्गुरुदेव का करुणापूर्ण हृदय छलक उठा। उनके हृदय से बरसते कृपा-अमृत ने साधक की तमाम साधनाएं पूर्ण कर दीं। पूर्ण गुरु ने शिष्य को पूर्ण गुरुत्व में सुप्रतिष्ठित कर दिया।**

उसके बाद कुछ वर्ष डीसा (गुजरात) में ब्रह्मानन्द की मस्ती लूटते हुए एकान्त में रहे। फिर अहमदाबाद में मोटेरा गाँव के पास साबरमती नदी के किनारे भक्तों ने एक कच्ची कुटिया बना दी। वहाँ से उन पूर्ण विकसित सुमधुर आध्यात्मिक पुष्प की मधुर सुवास चारों दिशा में फैलने लगी। दिन-दहाड़े भी जहाँ चोरी-डकैती और खून की घटनाएँ होती थीं ऐसी डरावनी उबड़-खाबड़ भूमि में स्थित वही कुटिया आज एक महान तीर्थधाम बन चुकी है। उसका नाम है संत श्री आसारामजी आश्रम।

इस ज्ञान की प्याऊ में आकर समाज के लब्ध-प्रतिष्ठित श्रीमंत लोगों से लेकर सामान्य आमजनता तक सब लोग ध्यान और सत्संग का अमृत पीते हैं और अपने जीवन की दुःखद गुत्थियों को सुलझाकर धन्य होते हैं। यहाँ पर वर्ष-भर में चार-पाँच बड़े ध्यान-योग शिविर गुरुपूर्णिमा, उत्तरायण, शरदपूनम, चेटीचन्द आदि पर्वों पर लगते हैं, जिसमें रहकर असंख्य लोग ध्यानामृत पीकर ईश्वरीय आनन्द लूटते हैं। हर रविवार और बुधवार के दिन भी ऐसा ही एक मीनी शिविर हो जाता है।

**आसुमल की विवेक-संपन्न बुद्धि ने संसार की असारता और परमात्मा ही एकमात्र परम सार है यह बात दृढ़तापूर्वक जान ली थी। दस वर्ष की उम्र में तो अनजाने ही रिद्धि-सिद्धि सेवा में हाजिर हुई थी। लेकिन अगम के प्रवासी वहीं रुकनेवाले नहीं थे। वैराग्य की अग्नि उनके अंतरतम में प्रकट हो चुकी थी।**

अहमदाबाद के अलावा सुरत, भोपाल, इन्दौर, पुष्कर, रतलाम, राणापुर, आमेट, सुमेरपुर, सागवाड़ा, हिम्मतनगर, ऋषिकेष, भावनगर, राजकोट, वृंदावन आदि स्थानों में भी आश्रम स्थापित हो चुके हैं जहाँ वर्षभर में ध्यान योग शिविरों एवं सत्संग समारोह तथा महोत्सव द्वारा हजारों हजारों लोग ईश्वरीय आनंद की तृप्ति पाते हैं। तदुपरांत गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान एवं मध्यप्रदेश के कई शहरों में तथा इग्लैंड, अमेरिका, दुबई, हाँगकाँग आदि स्थानों में कई सत्संग-केन्द्र खुल चुके हैं जो पूज्यश्री के सत्संग समारोह का आयोजन करके दैवी कार्य में सहयोगी हो रहे हैं।

पूज्यश्री की असीम करुणा एवं लोक-सेवा के कार्य-कलापों को देखकर किसी अवतार का सहज ही स्मरण हो आता है। वे अध्यात्म-आकाश के देदीप्यमान सूर्य हैं। जो लोग जहाँ भी सेवारत हैं उनको वहीं प्रकाश मिलता है। वे सबके हैं, सब कुछ उनमें समाहित है। उनके प्रेरक मार्गदर्शन में कई मानव-कल्याण की प्रवृत्तियाँ संचालित हो रही हैं, जैसे कि विद्यार्थी-उत्थान, नारी-उत्थान, पिछड़े-क्षेत्रों में सेवाकार्य, साधकों को दिव्य आध्यात्मिक मार्गदर्शन आदि। कई शिष्यवृन्द, जिज्ञासु एवं साधकगण इस मानवीय सर्वांगी विकास के दैवी कार्य में सम्मिलित होते रहते हैं। इस प्रकार के दैवी कार्य में जो लोग यत्किंचित भी लगे हुए हैं उन सबको हमारा धन्यवाद है। वे बड़भागी हैं। जो लोग ईश्वर और संतों के दैवी कार्यों में साझीदार होते हैं वे ईश्वर और संतों के दैवी अनुभव में भी भागीदार हो जाते हैं।

ॐ ॐ ॐ

*

# आश्रम-दर्शन

जीवमात्र दुःख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति के लिए सदा प्रयत्नशील होता है। हम भी अगर अपने जीवन की प्रवृत्तियों को शान्त चित्त से निहारें तो पता चलेगा कि हमारी जीवन-नौका की पतवार में भी यही पवन भर कर नौका को बहा ले जा रहा है।

विश्व के कोटि कोटि मनुष्यों में एक वर्ग ऐसा है जो जीवन के इस प्राण-प्रश्न को सभानता से जानता है, उसके सच्चे हल के लिए धर्म और अध्यात्म की ओर मुड़ता है। वह मंदिरों में जाता है, कथाएं सुनता है, शास्त्रों का अभ्यास करता है, धार्मिक क्रिया- काण्ड में शरीक होता है। वह व्रत-उपवास, आराधना-उपासना करता है, जपानुष्ठानादि करता है। कोई इससे आगे बढ़कर आसन, प्राणायाम आदि के अभ्यासपूर्वक योग-साधनाएं भी करता है।

इतना सारा करते हुए भी मनुष्य को जीवन में आंतरिक सुख की परितृप्ति मिलती नहीं है।

'शास्त्र और संत बताते हैं कि परमात्मा सर्वव्यापक हैं, नित्य हैं, आनन्द-स्वरूप हैं। अगर कोई भी स्थान परमात्मा से खाली न हो तो हममें भी परमात्मा होने चाहिएँ। उनके आनन्द-स्वरूप का स्पर्श हमें भी होना चाहिए। लेकिन हम तो दुःख, चिन्ता, भय और शोक से कुचले जा रहे हैं। कौन-सा आवरण हमें परमात्मा से अलग कर रहा है?' इस प्रकार सोचता हुआ आज का धार्मिक मनुष्य मनोमंथन करता है कि प्राचीन शास्त्रों में वर्णित सर्वव्यापक, नित्य, आनन्द-स्वरूप ईश्वर की झाँकी अपने हृदय में पाकर इन सब प्रश्नों का समाधान पा लेना क्या आज भी संभव है?

हाँ, अवश्य ... अवश्य। मनुष्य को उलझानेवाले इन प्रश्नों का समाधान साधना के ठोस परिणामों के द्वारा करवाकर पिपासु साधक के जीवन को ईश्वराभिमुख बनाकर मधुर बना देनेंवाले ऋषि-महर्षि, संत-महापुरुष आज भी समाज में उपलब्ध हैं। **'बहुरत्ना वसुन्धरा...।'** इन संत - महापुरुषों की सुकुमार सुगंधित पुष्पमाला में **प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज एक पूर्ण रूपेण सुविकसित सुमधुर पुष्प हैं।**

अहमदाबाद शहर के शोरगुल से दूर, मनोरम्य साबर मैया की गोद में स्थित पावन आश्रम के अध्यात्म-पोषक माहौल में आज हजारों हजारों साधक जाकर कुण्डलिनी योग एवं ध्यान के प्रयोगों में शरीक होकर प्राचीन ऋषि-महर्षि- ब्रह्मवेत्ताओं के प्रसाद समान 'वेदान्त शक्तिपात-वर्षा' का लाभ लेकर अपने वैयक्तिक पारमार्थिक जीवन को अधिकाधिक उन्नत एवं आनन्दमय बना रहे हैं। चित्त में समता का प्रसाद पाकर व्यावहारिक जीवन की नौका को उमंग और उत्साह से खेकर निहाल हो रहे हैं।

तो ... आइये, हम भी .... आत्मिक प्रेम में नहलाकर ईश्वरीय आनन्द में सराबोर कर देनेवाले, वेदान्त के अनुपम अनुभव का आस्वाद करवानेवाले, अद्‌भुत व्यक्तित्वयुक्त होते हुए भी व्यक्तित्व से परे विराट स्वरूप में विचरनेवाले उन अलौकिक सत्पुरुष के पावन चरणों से एवं ध्यान-सत्संग-कीर्तन के स्पन्दनों से सराबोर पवित्र तीर्थभूमि **संत श्री आसारामजी आश्रम** का दर्शन करके धन्य बनें।

## (१) मोक्षकुटीर

सन् १९७० में अहमदाबाद शहर के पास, गांधीनगर जानेवाले मार्ग पर, साबरमती नदी के तट पर, गहरे कोतरोंवाली भयानक भूमि में दिन दहाड़े भी जहाँ चोरी और खून की घटनाएं बन जायँ, शराब की भट्ठियाँ चलें ऐसी भूमि में एक अलगारी योगी के पावन पदार्पण हुए। साबरमती के विशाल रेतीले पट पर दृष्टि को एकाग्र करके उन योगीराज ने आज के समाज की दिशाहीन दुःखमय

**यह कुटीर और इसके इर्दगिर्द सुविकसित पावन माहौल .... यही है गुजरात एवं भारत के अन्य प्रान्तों में तथा विदेशों में आत्मानन्द के सागर लहरानेवाले पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज का भव्य आश्रम।**

अवस्था को लक्ष्य में रखकर मन ही मन संकल्प किया। संसार की मरुभूमि में त्रिविध ताप से तपते हुए मानव-समुदाय को आनन्द का अमृत-जल पिलाकर, उसे शांति देकर, उसके लिए विशाल वटवृक्ष समान विरामस्थान बनने का निर्णय किया। थोर, करड़े, बोरडी एवं बबूल के कँटीले झुण्ड के बीच उबड़-खाबड़ भूमि में ईंट एवं मिट्टी से निर्मित एक कच्ची कुटीर बनाई गई। योगीराज ने इसमें अपना आसन जमाया। 'मोक्षकुटीर' के नाम से प्रसिद्ध यह कच्ची छोटी-सी कुटीर आज आंतरराष्ट्रीय क्षितिजों को स्पर्श करनेवाला पावन तीर्थधाम बन चुकी है। यह कुटीर और इसके इर्दगिर्द सुविकसित पावन माहौल.... यही है गुजरात एवं भारत के अन्य प्रान्तों में तथा विदेशों में आत्मानन्द के सागर लहरानेवाले **पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज का भव्य आश्रम।**

**मोक्षकुटीर और उसके प्रांगण के एक एक कण को पूज्यश्री ने आत्मानन्द से भर दिया है। इसीलिए इस मोक्षकुटीर के द्वार में प्रविष्ट होते ही संसारी जीव शोक-संताप भूलकर आत्मानन्द के सागर की सैर करने लग जाता है।**

मोक्ष कुटीर और उसके प्रांगण के एक एक कण को पूज्यश्री ने आत्मानन्द से भर दिया है। इसीलिए इस मोक्षकुटीर के द्वार में प्रविष्ट होते ही संसारी जीव शोक-संताप भूलकर आत्मानन्द के सागर की सैर करने लग जाता है। प्रारंभ के दिनों में पूज्यश्री कईबार अधिकारी साधकों को सुबह - शाम यहाँ बैठाकर ध्यान करवाते, शक्तिपात के द्वारा दिव्य अनुभूतियाँ करवाते और साधक लोग सहज में निजानन्द में चले जाते।

आजकल इस कुटीर को गोबर से लिपकर, विभिन्न संत-महापुरुषों की आकर्षक झाँकियों से सुशोभित करके दर्शनार्थियों के लिए खुली रखी गई है।

## (२) मोक्षद्वार

यह है उदार एवं उदात्त आदर्शों से युक्त आश्रम का, अर्धचन्द्राकार डिझाइनवाला विशाल भव्य प्रवेशद्वार... 'मोक्षद्वार'। किसी भी प्रकार के मानव-सर्जित भेदभावों से परे रहकर यह 'मोक्षद्वार' सभी को आत्मकल्याण के लिए आश्रम में सत्कार करता है। कोई भी मनुष्य आत्म-कल्याण के शुद्ध भाव से इस 'मोक्षद्वार' में प्रविष्ट होकर श्रद्धा एवं भक्तिभावपूर्वक संत-सान्निध्य का सेवन करता है उसका जीवन अवश्यमेव मोक्ष के मार्ग पर अग्रसर होता है।

**कोई भी मनुष्य आत्म-कल्याण के शुद्ध भाव से इस 'मोक्षद्वार' में प्रविष्ट होकर श्रद्धा एवं भक्तिभावपूर्वक संत-सान्निध्य का सेवन करता है उसका जीवन अवश्यमेव मोक्ष के मार्ग पर अग्रसर होता है।**

'मोक्षद्वार' में प्रविष्ट होकर आगे बढ़ते ही दोनों ओर सुन्दर हरियाली (लॉन) दिखती है। दाहिनी ओर सफेद चमकीले पत्थरों से एक आकर्षक मनमोहन जलप्रपात बनाया हुआ है। उसकी कलकल - छलछल मधुर ध्वनि दर्शनार्थी के चित्त में आनन्द की लहरें जगाती है।

## (३) कल्पवृक्ष - वट बादशाह

आश्रम में प्रवेश करते ही सामने कल्पवृक्ष की तरह मनोकामना की पूर्ति करनेवाले वट बादशाह के दर्शन होते हैं। ऋषियों की कामधेनु और स्वर्ग के कल्पवृक्ष के बारे में तो हम सबने सुना है; लेकिन इस पृथ्वी पर ... ऐसे कलिकाल में कल्पवृक्ष ... ! सचमुच आश्चर्य की बात है! **अद्भुत लीला और महाप्रताप तो पूज्यश्री का ही है; जिन्होंने संसारी जीवों को त्रिविध ताप से बचाने के लिए करुणा करके इस वटवृक्ष में शक्तिपात किया है।** अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए इस वटवृक्ष की प्रदक्षिणा करके हजारों भक्त अपने जीवन की गुत्थियों को सुलझाते हैं, आधि-व्याधि-उपाधियों का सफलतापूर्वक अंत कर देते हैं।

इस वटवृक्ष के भी परम सौभाग्य हैं कि इन निजानन्दी पूर्णेश्वर पूज्य बापू ने अपने आत्मानन्द की एक तरंग का स्पर्श कराके उसे संसार के दुःखीजनों के

लिए विश्रान्ति-स्थान बना दिया है, उसमें सर्वकामनापूर्ति का सामर्थ्य भर दिया है। हररोज सैकड़ों हजारों लोग अपनी मंगल-कामनापूर्ति के लिए वट बादशाह की प्रदक्षिणा करके अपना भाग्य बदलते हैं, दुःखों को दूर करके सुख की अनुभूति करते हैं।

**अद्‌भुत लीला और महाप्रताप तो पूज्यश्री का ही है; जिन्होंने संसारी जीवों को त्रिविध ताप से बचाने के लिए करुणा करके इस वटवृक्ष में शक्तिपात किया है।**

प्राणिमात्र के परम हितैषी पूज्यश्री ने **'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः'** इस भावना को साकार करते हुए अपने अन्य आश्रमों में ... सुरत, भोपाल, रतलाम (पंचेड़), हिम्मतनगर आदि में आये हुए आश्रमों में भी ऐसे ही वट बादशाह तथा कल्पवृक्षों का रोपण किया है। हजारों श्रद्धालु भक्तजन उनका अनुपम लाभ ले रहे हैं।

## (४) कार्यालय

'मोक्षद्वार' में प्रवेश करने के बाद भीतर के भाग में दोनों ओर दो कार्यालय हैं। दाहिनी ओर स्थित कार्यालय में पूज्यश्री की निरंतर प्रवाहित पावन योगवाणी में से संकलित सत्साहित्य तथा अमृतवाणी की ऑडियो-विडियो कैसेट्स मिलते हैं। ध्यान एवं सत्संग-कार्यक्रमों में पू. बापू की प्रस्फुरित अमृतधारा समान योगवाणी तत्काल ही अद्यतन रिकार्डिंग मशीनों के द्वारा कैसेट्स में भरकर इस कार्यालय में वितरण के लिए रखी जाती हैं। समाज में ज्ञान का सिंचन करनेवाले हिन्दी, गुजराती, सिंधी, अंग्रेजी, उर्दू एवं मराठी भाषा में प्रकाशित पुस्तकें, कैसेट्स तथा जीवन में आध्यात्मिक आभा और प्रभुमय सुवास प्रकटाने के लिए रुद्राक्ष, चन्दन, स्फटिक एवं तुलसी की मालाएं, चन्दन-काष्ठ, गरम आसन, गौमुखी, पूज्यश्री के रंगीन मनोहारी फोटोग्राफ्स, लेमीनेशन्स, मन को स्वस्थ एवं स्फूर्तिला बनाने में सहायरूप तथा अनेक रोगों में अकसीर इलाज सिद्ध होनेवाला संतकृपा चूर्ण रखनेवाला यह कार्यालय समाज को सर्वांगी पुष्टि देनेवाला प्राणवान केन्द्र है।

बायीं ओर दूसरे कार्यालय में आश्रम-संचालन की कार्यवाही होती है। यहाँ संचालकीय कार्य एवं सभाएँ होती हैं। बाहरगाँव से आनेवाले मुलाकातियों को, आगन्तुक सज्जनों को यहाँसे यथायोग्य आवश्यक जानकारियाँ मिल सकती हैं।

## (५) सत्संग-भवन

'मोक्षकुटीर' की बायीं ओर आया हुआ वशिष्ठ-भवन पुरानी स्मृतियों को फिर से ताज़ी कर देता है। इस हॉल का निर्माण पूज्यश्री के दैनिक सत्संग, ध्यान एवं कीर्तन के कार्यक्रमों के लिये हुआ था। करीब ५०० भक्त बैठ सकें इतना बड़ा यह हॉल, सुन्दर ज्ञानवर्धक रंगीन भित्ती-पत्रों से सुशोभित, आकर्षक फर्नीचर से सजाया हुआ यह हॉल कुछ ही समय में छोटा पड़ने लगा। भक्तों की संख्या बढ़ने लगी। अतः एक बड़े पक्के हॉल का निर्माण किया गया जिसका नाम रखा गया 'प. पू. श्री लीलाशाह भवन।'

नदी-तट पर स्थित इस सत्संग-भवन ने तीन-चार साल तक सतत सत्संग-पिपासुओं की ज्ञान-पिपासा तृप्त की और भक्तजनों ने यहाँ ज्ञान, भक्ति और ध्यान की त्रिवेणी में बार-बार स्नान करके बहुत बहुत पुण्य-अर्जन किया। तदनन्तर यह भवन भी छोटा पड़ने लगा। फिर आठ-दस हजार भक्तजन बैठ सकें ऐसे एक विशाल एवं भव्य सभा-मण्डप 'व्यास भवन' का निर्माण किया गया। नारियल के पत्ते एवं बांस से निर्मित यह आकर्षक विशाल भवन प्राचीन ऋषि-महर्षियों के सुरम्य अलौकिक आश्रमों का स्मरण कराता है। पूज्यश्री की व्यासपीठ के लिए उतना ही नयनाभिराम, चमकीले संगमरमर में से रचित, आकर्षक डिझाइनवाला व्यास मंदिर बनाया है। यह खुला

**नारियल के पत्ते एवं बांस से निर्मित यह आकर्षक विशाल भवन प्राचीन ऋषि-महर्षियों के सुरम्य अलौकिक आश्रमों का स्मरण कराता है।**

भवन प्राचीन और अर्वाचीन शैली का समन्वय रूप बनकर हमें विश्वशान्ति की युक्ति देता है कि भारतवर्ष का प्राचीन ब्रह्मज्ञान और तीव्र गति से आगे बढ़नेवाले आधुनिक विज्ञान का अगर सुखद संमिश्रण हो जाय तो आज के मनुष्य के उत्तप्त हृदय को शीतलता पाने में देर नहीं लगेगी। मनुष्य-मनुष्य में प्रेम एवं विश्वशान्ति का प्रसार आसानी से हो सकेगा। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है हर रविवार, बुधवार एवं पर्वों के दिनों में आयोजित सत्संग एवं ध्यान योग, वेदान्त शक्तिपात साधना शिविरों में। उस समय हजारों हजारों हृदय एक साथ सत्संग, ध्यान और कीर्तन की अलौकिक त्रिवेणी में गोते लगाकर आनन्द-विभोर एवं भावविभोर होकर अन्तरतम में गहन यात्रा करते हैं। सचमुच, वह अनुभव तो लाबयान है। जो चखता है वही उस दिव्य रस का मजा जान सकता है।

**हर रविवार, बुधवार एवं पर्वों के दिनों में आयोजित सत्संग एवं ध्यान योग, वेदान्त शक्तिपात साधना शिविरों में हजारों हजारों हृदय एक साथ सत्संग, ध्यान और कीर्तन की अलौकिक त्रिवेणी में गोते लगाकर आनन्द-विभोर एवं भावविभोर होकर अन्तरतम में गहन यात्रा करते हैं।**

## (६) शांतिकुटिर

व्यास-मंदिर के पीछे ही है पूज्यश्री का वैकुण्ठ-धाम। उसका नाम है शांतिकुटिर। आश्रम के बिल्कुल अंतिम भाग में, नदी के किनारे पर, एकान्त स्थान में स्थित यह मनोरम्य कुटिर पू. बापू के शांतिप्रिय एवं आत्मानन्दी स्वभाव का परिचय देती है। दूर से ही शांतिकुटिर के दर्शन करने से तप्त और निराश दिलों में दिव्य शांति और अलौकिक शक्ति का संचार होता है, चित्त में प्रसन्नता छा जाती है।

## (७) साधना सदन

आश्रम के मुख्य प्रांगण से नदी की ओर सीढ़ी उतरते ही दाहिनी ओर अर्थात् प. पू. श्री लीलाशाह भवन के सामने नयनरम्य सुन्दर लॉन, कृत्रिम जल-प्रपात एवं फव्वारे से आवेष्टित तीन मंझिल का, अद्यतन डिझाइनवाला भव्य और नया बिल्डींग है। उसमें अतिथि, आमंत्रित साधुजन एवं उच्च कक्षा के साधकों को मौन-साधना के लिए निवास दिया जाता है। नदी के तट पर प्रकृति की गोद में, परम पूज्य सद्गुरुदेव की अमीमय दृष्टि में रहकर, सद्गुरुदेव ने हमारे हृदयों में जतायी हुई अलख की पहचान को सुवर्ण - अक्षरों से ठोस अनुभूति के फलक पर अंकित कर लेने के लिए अधिकारी साधक यहाँ रहकर आत्म-विचार एवं योग-साधना करके मनुष्य-जन्म सफल बनाते हुए पूज्यश्री के बताये हुए आध्यात्मिक मार्ग में पुरुषार्थ करते हैं। इसी बिल्डींग में एक जप-मंदिर भी बनाया है जिसके विद्युन्मय वातावरण में बैठकर साधक जप-ध्यान करके जीवन सफल बनाते हैं।

**दूर से ही शांतिकुटिर के दर्शन करने से तप्त और निराश दिलों में दिव्य शांति और अलौकिक शक्ति का संचार होता है, चित्त में प्रसन्नता छा जाती है।**

## (८) भोजनालय

व्यास भवन की दाहिनी ओर है आश्रमवासियों एवं आगन्तुक भक्तजनों को शुद्ध, सात्त्विक और पवित्र प्रसाद (भोजन) प्राप्त करानेवाला भोजनालय। मध्यान्ह सन्ध्या एवं सायं सन्ध्या के बाद यहाँ के स्वच्छ, शांत पवित्र वातावरण में बैठकर साधकगण 'ॐ सहनाववतु ... सहनौ भुनक्तु... सहवीर्यं करवावहै... तेजस्वीनावधीतमस्तु... मा विद्विषावहै... ॐ शांतिः शांतिः शांतिः' के वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ सामूहिक रीति से प्राणों को आहुति देते हैं। 'जैसा अन्न तैसा मन' इस उक्ति के मुताबिक इस सात्त्विक भोजन से साधकों में सत्त्वगुण की वृद्धि होती है, तन-मन-बुद्धि में पवित्रता आती है, सेवा-भावना विकसित होती है और अन्तःकरण शुद्ध होता है। फलतः वे पूज्यश्री की अनन्त रहस्यों

से भरपूर योगवाणी समझने की एवं आत्मसात् करने की योग्यता हांसिल करते हैं।

## (९) मौनमंदिर

प्रस्तुत भोजनालय के ठीक नीचे एक मौनमंदिर है। उसमें हर रविवार को साधक मौन-साधना के लिए बैठता है और दूसरे रविवार को बाहर आता है। कुटुम्ब-परिवार, मित्र-सम्बन्धी लोग, नौकरी-व्यापार-धन्धा आदि तमाम प्रकार के व्यवहारों से अलिप्त बनकर वह साधक इस मौनमंदिर के एकान्त में परमात्मा के समीप पहुँचने के लिये पुरुषार्थ करता है। साधना की उत्कण्ठावाले साधक को ऐसा एकान्तवास, साधनामय माहौल एवं साधना के परमाणु से सघन यह मौन-निवास ऊपर उठने में, दिव्य मार्ग में गति करने में अत्यंत लाभकारक सिद्ध होता है। उसे विभिन्न आध्यात्मिक अनुभव होने लगते हैं। जिज्ञासु को षट्संपत्ति की प्राप्ति होती है। उसकी मोक्षेच्छा (मुमुक्षा) प्रबल बनती है।

साधक को मौन मंदिर में प्रवेश करा कर बाहर से ताला लगाया हुआ द्वार फिर एक सप्ताह के बाद ही खुलता है। उसे जलपान भोजनादि एक खिड़की के द्वारा दिये जाते हैं। नहाने-धोने की व्यवस्था मौन मंदिर के भीतर ही है। एक सप्ताह तक वह किसीको देखता नहीं और उसको भी कोई देखता नहीं है। वह किसी भी प्रकार के विक्षेप के बिना परमात्मामय बन सकता है। उस बन्द द्वार के भीतर उसे गुरुदेव के एवं अनेक संतों-ऋषियों के तथा अपने इष्टदेव के दर्शन एवं संकेत मिलते हैं। कभी अनुभव न किया हो ऐसा आध्यात्मिक तेज और ओज अनुभव में आता है।

इस प्रकार भाग्यवान साधक जन साधना के दिव्य परमाणुओं से युक्त इस साधना-खण्ड, मौनमंदिर में साधना करके तृप्त बनते हैं।

## (१०) गौशाला

ब्रह्मवेत्ता पू. बापू की चरणधूली से निरन्तर पावन बननेवाली इस तीर्थभूमि में पूर्व के किसी पुण्यों के प्रभाव से ही यहाँ ध्यान-सत्संग के स्पन्दनों से सराबोर इस हवामान में श्वास लेने का एवं अपने खुरों से इस तीर्थभूमि को खूंदने का सौभाग्य इन गौमाताओं को मिल रहा है।

भोजनालय के पीछे के हिस्से में स्थित इस गौशाला में रहनेवाली गौमाताएं भी साक्षात् ब्रह्मस्वरूप पू. बापू एवं ईश्वरीय मार्ग में कदम रखनेवाले साधकों की सेवा में दूध, दही, छाछ, मक्खन, घी तथा बाग-बगीचों के लिए खाद एवं गोबर गैस प्लान्ट के लिए गोबर देकर, पशुयोनि में रहकर भी अपने भवबन्धन काटती हुई उत्क्रान्ति की परंपरा में शीघ्र गति से उन्नत होकर जीवन को धन्य बना रही हैं। आश्रम के साधक ही इन गौमाताओं की देखभाल, सेवा-चाकरी करते हैं... बछड़ों को स्नेह करते हैं।

## (११) धन्वंतरि आरोग्य केन्द्र

ध्यान, भजन, साधना के द्वारा भवरोग मिटाने के लिए पू. बापू के श्रीचरणों के शरण में आनेवालों की तरह इस आश्रन में तन-मन की छोटी-मोटी आधि-व्याधियों से पीड़ित तथा अन्य दवाइयों - इलाजों से थके हुए लोग भी निरन्तर आते रहते हैं। यहाँ पूज्य बापू के आशीर्वाद के साथ धन्वंतरि आरोग्य केन्द्र के नाम से आयुर्वैदिक औषधालय (दवाखाना) खोला गया है। डॉक्टरों के भी डॉक्टर ऐसे पूज्यश्री के मार्गदर्शन में आयुर्वेद के कुशल डॉक्टर, वैद्य तथा साधक-साधिकाएं बिना मूल्य दर्दी-नारायणों की सेवा-शुश्रूषा एवं इलाज करते हैं, आयुर्वैदिक औषधियाँ देते हैं। कई बार तो अहमदाबाद और बम्बई

**नदी के तट पर प्रकृति की गोद में, परम पूज्य सद्गुरुदेव की अमीमय दृष्टि में रहकर, सद्गुरुदेव ने हमारे हृदयों में जतायी हुई अलख की पहचान को सुवर्ण अक्षरों से ठोस अनुभूति के फलक पर अंकित कर लेने के लिए अधिकारी साधक यहाँ रहकर आत्म-विचार एवं योग-साधना करके मनुष्य-जन्म सफल बनाते हुए आध्यात्मिक मार्ग में पुरुषार्थ करते हैं।**

की प्रसिद्ध अस्पतालों से वापस लौटे हुए असाध्य रोगों के दर्दियों के दर्द भी आश्रम में आने पर निर्मूल हो गये हैं। ऑपरेशन थीएटर में दाखिल करने की तैयारीवाले दर्दियों के रोग में सुधार हो गये हैं।

## (१२) महिला आश्रम

नारीशक्ति जागरण के लिए मुख्य आश्रम से कुछ दूरी पर महिलाओं के लिए 'अनसूया आश्रम' की स्थापना की गई है।

साधनाकाल के दौरान शादी के तुरन्त बाद पू. बापू आत्म-साक्षात्कार के अंतिम लक्ष्य की सिद्धि के लिए गृहस्थी का मोहक जामा उतारकर सद्गुरुदेव के सान्निध्य में चले गये थे। पूज्यश्री की दी हुई सूचनाओं एवं मार्गदर्शन के मुताबिक सर्वगुण-सम्पन्न परम पतिव्रता महासती श्री श्री माँ लक्ष्मीदेवी ने पूज्यश्री की अनुपस्थिति में तपोनिष्ठ साधनामय जीवन बिताया। सांसारिक सुखों की आकांक्षा छोड़कर पूज्यश्री के आदर्शों की सेवा करते हुए आध्यात्मिक साधना के रहस्यमय गहन मार्ग में पदार्पण किया। साधना-काल के दौरान जीवन को सेवा के द्वारा घिसकर चन्दन की भाँति सुवासित बनाया। सौम्य, शांत, गम्भीर वदनवाली पूज्य माताश्री महिला आश्रम में रहकर साधिकाओं को साधनामार्ग में सहायभूत होकर पूज्यश्री के दिव्य कार्य में सहभागी हो रही हैं। सांसारिक वातावरण से दूर रहकर ईश्वरीय मार्ग पर चलने की इच्छावाली बहनें इस महिला आश्रम में रहतीं हैं।

तदुपरान्त, समाज या परिवार से त्रस्त होकर आत्महत्या के विचारों में उलझी हुई बालिकाएँ, महिलाएँ विश्रान्ति के वटवृक्ष समान इस महिला आश्रम में कुछ दिन रहकर विश्रान्ति पाती हैं। बाद में उनके कुटुम्बियों के साथ उनका स्नेहभाव पुनः स्थापित कराकर संसार की गाड़ी सुचारु रूप से चलाने की प्रेरणा इस महिला आश्रम से उनको मिलती रहती है।

## (१३) अन्य आश्रम एवं समितियाँ

इन सब गतिविधियों के उपरान्त आज के उबलते हुए व्यथित मानव-समुदाय को पूज्यश्री का अमृतमय प्रेम और शांति का प्याला पिलाने के लिए भक्तजनों ने इतने अल्प काल में ही बड़े पैमाने पर भारतभर में जगह जगह 'संत श्री आसारामजी आश्रम' एवं श्री योग वेदान्त सेवा समितियों का निर्माण किया है। इन आश्रमों एवं समितियों की लम्बी सूचि सचमुच आश्चर्यजनक एवं हृदय को पुलकित कर देनेवाली है जैसे कि सुरत, इन्दौर, भोपाल, रतलाम, आमेट, पुष्करराज, हिम्मतनगर, ऋषिकेश, भावनगर, राजकोट, वृन्दावन, सुमेरपुर, सागवाड़ा, राणापुर (झाबुआ) आदि आदि स्थानों के आश्रम तथा असंख्य समितियाँ।

**सात्त्विक भोजन से साधकों में सत्त्वगुण की वृद्धि होती है, तन-मन-बुद्धि में पवित्रता आती है, सेवा-भावना विकसित होती है और अन्तःकरण शुद्ध होता है। फलतः वे पूज्यश्री की अनन्त रहस्यों से भरपूर योगवाणी समझने की एवं आत्मसात् करने की योग्यता हांसिल करते हैं।**

इससे भी अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि इतनी सारी विशाल प्रवृत्तियाँ, देश-विदेश में प्रचार-कार्य, तमाम आश्रमों एवं करीब चार सौ साढ़े चारसौ समितियों का संचालन, आदिवासी क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर छाछ-केन्द्र एवं समूह-भोज का आयोजन, मुख्य मुख्य नगरों एवं छोटे बड़े असंख्य गाँवों में पूज्य बापू के सत्संग समारोहों का सतत आयोजन, ऑडियो तथा विडियो कैसेटों का उत्पादन, साहित्य-प्रकाशन एवं उसका प्रचार तथा वितरण, संतकृपा चूर्ण एवं अन्य औषधियों का सेवाभाव से निर्माण, ध्यान योग शिविरों का आयोजन आदि तमाम सेवा-प्रवृत्तियाँ समर्पित साधकगण स्वयं ही करते हैं।

इन सब बातों से इतना तो अवश्यमेव सिद्ध हो रहा है कि प्राणिमात्र के परम हितैषी, श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ योगीराज संत शिरोमणि पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू का दिव्य आश्रम आज समग्र पृथ्वी का एक अलौकिक आभूषण रूप बन चुका है।

*

# भारतीय योग और संत श्री आसारामजी आश्रम की बहुविध प्रवृत्तियाँ

व्यावहारिक जीवन में उत्पन्न होने वाले विषाद को दूर कर जीवन को आनंदमय बनाने के लिए, उमंग, उत्साह, प्रसन्नता और माधुर्य से जीवन को सराबोर करने के लिए, चित्त को चिन्ता और भय के भँवर से मुक्त करके निश्चिन्त होने के लिए, इस जीवन में ही आत्मस्वरूप को पहचान कर जीवन्मुक्ति का विलक्षण आनंद अनुभव करने के लिए भारतीय संस्कृति में योग और वेदान्त में अमोघ उपाय हैं।

भारतीय योग के अनुसार अपने शरीर में रीढ़ की हड्डी के अन्तिम मनके से लेकर सिर तक सात केन्द्र या चक्र हैं। मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धाख्य, आज्ञा और सहस्रार। इनमें से नीचे के केन्द्रों में स्थित अपनी जीवनशक्ति हलके विचार एवं नीच कार्यों की ओर घसीट ले जाती है। यह जीवनशक्ति जागृत होकर ऊपर के केन्द्रों में आये तब कितना ही निम्न कोटि का मानव भी उच्च से उच्च कार्य भी कर सकता है। निम्न केन्द्रों में जीने वाले मानव के लिए कितना ही कानून बनाये जायँ फिर भी वह लुकछिप कर कुकृत्य करेगा ही। ऊपर के केन्द्रों में होगा तो उसके हाथ से इतने सारे कुकर्म नहीं होंगे। निम्न केन्द्रों में जीने वाला मानव हमेशा चिन्तातुर, भयभीत और अशान्त रहता है। ऊपर के केन्द्रों में पहुँचे हुए मानव में निश्चिन्तता, निर्भयता, प्रसन्नता, माधुर्य, सुख और शान्ति दृष्टिगोचर होती है।

तब... निम्न केन्द्रों में सुषुप्त पड़ी हुई अपनी जीवन-शक्ति को किस तरह जगाया जाय? इस शक्ति को ऊर्ध्वमुखी करके ऊपर के केन्द्रों की ओर किस तरह बहाई जाय? व्यावहारिक जीवन में सफलता प्राप्त करके जीवन को तेजस्वी, ओजस्वी बनाकर आत्मज्ञान के पारमार्थिक मार्ग की ओर किस तरह आगे बढ़ा जा सके? व्यवहार और परमार्थ का समन्वय साधकर संसार में रहते हुए जीवन्मुक्ति का स्वाद किस तरह जाना जा सके?

इन सभी प्रश्नों का स्पष्ट, अनुभवमूलक प्रत्यक्ष जवाब याने प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के पावन सान्निध्य और सूक्ष्म मार्गदर्शन में चलती हुई बहुविध आध्यात्मिक प्रवृत्तियाँ और उनके भारतभर में स्थापित दिव्य आश्रमों की भव्य श्रृंखला।

## (१) आश्रम में चलने वाली मुख्य-मुख्य प्रवृत्तियों की सामान्य रूपरेखा

प्राचीन भारत की ब्रह्मविद्या के मूर्तस्वरूप, कुंडलिनी योग के अनुभवनिष्ठ ज्ञाता, वेदान्तनिष्ठ, तपोनिष्ठ, श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ योगीराज पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू के दर्शन मात्र से, उनके सान्निध्य में ध्यान करने से संतप्रेमी, ईश्वरप्रेमी, जिज्ञासु, मुमुक्षु साधकों की कुंडलिनी जागृत हो जाती है। प्राचीनकाल में ऐसे योगसिद्ध महापुरुषों की शक्तिपात वर्षा का लाभ लेकर योग-साधना के इच्छुक बड़े बड़े महाराजा, सम्राट राजसिंहासन छोड़ कर अरण्यों और गुफाओं में रहनेवाले उन महात्माओं की खोज में निकलते और उनको प्राप्त कर वर्षों तक उनकी सेवा करने के बाद इस दिव्य शक्तिपात वर्षों का अनुभव प्राप्त होता। जबकि यहाँ तो इस कृपाकटाक्ष का अनुभव पूज्य बापू के सान्निध्य में आनेवाले साधकों को सरलता से हो जाता है। इस प्रक्रिया के दरमियान साधक को अपने आप आश्चर्यजनक अनुभव होते हैं। उसकी साधना में आवश्यक ऐसे योगासन ध्यानावस्था में अपने आप होते हैं। विविध प्रकार के प्राणायाम और नृत्य होने लगते हैं। कोई हँसने लगता है, कोई रोने लगता है, कोई गीत और श्लोक गाने लगता है तो कोई बिल्कुल शान्त होकर आसन स्थिर कर समाधि का अनुभव करता है। सद्गुरु की शक्तिपात दीक्षा का प्रसाद प्राप्त करके पुनः साधक को साधना नहीं करनी पड़ती किन्तु साधक का नियंत्रण महामाया कुंडलिनी शक्ति ले लेती है। उसे तीव्र गति से आध्यात्मिक मार्ग की ओर अग्रसर करती है।

अश्रम में होने वाले ऐसे ध्यान के कार्यक्रमों में कितने ही साधकों के असाध्य रोग अगम्य रीति से तुरन्त मिट जाने के उदाहरण सन्मुख हैं। व्यावहारिक समस्याओं

में उलझे हुए कितने ही लोग को समाधान मिल जाते हैं। परिणाम स्वरूप व्यावहारिक जीवन को व्यवास्थित करके आनंदपूर्वक ईश्वरीय साधना के मार्ग पर आगे बढ़ सकते हैं।

(क) मुख्य आश्रम अहमदाबाद में रविवार एवं बुधवार और सुरत के आश्रम में रविवार और गुरुवार को पूज्यश्री की उपस्थिति में आम प्रजा के लिए कुंडलिनी योग के समूह ध्यान के कार्यक्रम, भक्ति- योग- वेदान्त के सत्संग, भजन- कीर्तन के कार्यक्रम होते हैं। मुख्य-मुख्य पर्व और उत्सवों के दिन भी ऐसे ही कार्यक्रमों का आयोजन आश्रमों में होता है एवं पर्वों के निमित्त प्रवचन भी होते हैं।

(ख) साल भर में विविध आश्रमों में विविध पर्वों पर बड़े बड़े ध्यानयोग और वेदान्त शक्तिपात साधना शिविरों का आयोजन होता है। इन शिविरों में गुजरात तथा भारत के सभी प्रान्तों — राजस्थान, मध्यप्रदेश, सौराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, बिहार, दिल्ली, पंजाब आदि स्थलों से साधक उमड़ पड़ते हैं। विदेशों से भी साधकों की टुकड़ियाँ इस शिविर में भाग लेने आती हैं। चार पाँच दिन आश्रम के मनोरम्य प्राकृतिक वातावरण में अगमनिगम के ओलिया लोकलाडिले पूज्य बापू के आध्यात्मिक चुम्बकीय सान्निध्य में रहकर ये साधक भाई- बहन अपने व्यावहारिक जगत को भूलकर ईश्वरीय आनंद में तल्लीन हो जाते हैं। बड़े बड़े तपस्वियों के लिए कष्टसाध्य ऐसे योग और वेदान्त के शिखिर पू. बापू के सान्निध्य में सहज भाव से सिद्ध होने लगते हैं। चार-पाँच दिन की साधना से मानो सारे जीवन की थकान उतर जाती है। साधक के तन मन में दिव्यता ठूँस ठूँस कर भर जाती है। हृदय में ईश्वरीय आनंद उछलने लगता है। योग और गूढ़ रहस्य हस्तगत होने लगते हैं।

(ग) विधार्थी ध्यानयोग एवं विद्यार्थी तेजस्वी तालीम शिविर का आयोजन भी इन बड़ों के शिविरों के साथ सुविधानुसार आयोजित किया जाता है। प्राणिमात्र के हितैषी पूज्यश्री आने वाले कल के भारत की दिशाहीन बनी इस नई पीढ़ी को भारतीय संस्कृति की गरिमा को समझाकर, जीवन के वास्तविक उद्देश्य की ओर गतिमान करते हैं।विद्यार्थियों को ओजस्वी, तेजस्वी बनाने तथा उनके सर्वांगी विकास के लिए ध्यान की विविध पद्धतियाँ सिखाते हैं। योगासन, प्राणायाम तथा सत्संग कीर्तन के द्वारा उनकी सुषुप्त- शक्तियों को जागृत कर समाज में फैली हुई खराब आदतों से बचने का बोधपाठ देते हैं। सचमुच भावि भारत के निर्माण में पूज्यश्री के इस अनुपम अलौकिक योगदान को शब्दों में वर्णन करना असंभव है।

## (२) श्री योग वेदान्त सेवा समिति

विविध प्रकार के सेवाकार्यों के संचालन के लिए पूज्य बापू की दिव्य प्रेरणा से श्री योग वेदान्त सेवा समिति की स्थापना की गई थी। आज इस समिति के साथ चार सौ पचास से अधिक उप समितियाँ भारत तथा परदेश में फैली हुई हैं। कुंडलिनी योग के निष्णात आचार्य, आध्यात्मिक प्रेम के सागर पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू जैसे महान संत और आज के समाज को जोड़नेवाली कड़ी के रूप में ये समितियाँ अपने अपने क्षेत्र में पूज्य बापू का दिव्य आध्यात्मिक सत्संग का आयोजन कर, ऑडियो- विडियो सत्संग कार्यक्रम, कीर्तन-यात्रा का आयोजन कर जनता को ईश्वरीय सुख-शान्ति का अमृत- प्रसाद पहुँचाने का पुण्यकार्य करती हैं। ये समितियाँ शाला, कॉलेज तथा विश्वविद्यालयों के युवक- युवतियों के बीच, शहरों तथा गाँवों में जाकर विविध प्रवृत्तियों सत्संग - कीर्तन - व्याख्यानमाला द्वारा समाज का नैतिक और आध्यात्मिक उत्थान हो; ऐसे प्रयास करती हैं।

### (क) सत्साहित्य प्रकाशन

विविध पर्व, उत्सव तथा ध्यान योग शिविर के समय सेवा, भक्ति, योग और वेदान्त का नीर बहाती पूज्य बापू की अमृतवाणी पर आधारित, मानवमात्र के शारीरिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक उत्थान के लिए अति मूल्यवान ऐसे आत्मवेत्ता महापुरुष के अनुभव, गहराई में से सहज वाणी के रूप में आनेवाली इस दिव्य निधि को लिपिबद्ध करके श्री योग वेदान्त सेवा समिति, अहमदाबाद आश्रम इसे पुस्तकाकार प्रकाशित करती है। आध्यात्मिकता के मूल तत्त्वों का सिंचन, संरक्षण और संवर्धन करने वाला यह साहित्य मानव जीवन के स्वास्थ्य और सुख-शान्ति के पथ पर अग्रसर करने के लिए समाज में अति मूल्यवान

सिद्ध हो रहा है। राष्ट्र के चारित्र्य-निर्माण के कार्य में उत्तम योगदान देने वाला ऊँचे से ऊँचा साहित्य बिल्कुल अल्प मूल्य में समाज को दिया जाता है। इस के साथ ही पूज्यश्री के सत्संग कार्यक्रमों की ऑडियो तथा विडियो कैसेट भी बनाई जाती है, यह साधनों का महत्त्वपूर्ण कार्य है। गुजराती तथा हिन्दी भाषा में एक द्विमासिक मेगजीन 'ऋषि प्रसाद' प्रकाशित किया जाता है। इसके सदस्यों की संख्या दूसरे ही वर्ष पचास हजार से भी अधिक हो गई है।

## (ख) संतकृपा चूर्ण तथा अन्य औषधियों का उत्पादन

मन-बुद्धि के स्वास्थ्य के लिए उत्तमकोटि का सत्साहित्य उपयोगी है वैसे ही शारीरिक स्वास्थ्य के लिए आश्रम का संतकृपा चूर्ण तथा ब्रह्मचर्यरक्षक जड़ीबूटियाँ अकसीर हैं। इसके सिवाय दूसरी औषधियों का भी सीमित मात्रा में निर्माण होता है। ये सभी सेवाकार्य आश्रम के भाई-बहनों ने अपने ऊपर ही ले लिये हैं।

## (ग) स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में सम्पर्क तथा प्रचार-प्रसार

आश्रम के अनुभवी साधक शालाओं में जाकर विद्यार्थी भाई-बहनों को योगासन के निर्देशन द्वारा शरीर के आरोग्य की तालीम देते हैं। प्राणायाम और योगासन द्वारा जीवन की शक्तियों को जागृत कर जीवन-सफलता के कार्य में उसे किस प्रकार से कार्यरत करे उस विषय में पूज्य बापू का अभिगम, आध्यात्मिक संदेश ये साधक शाला के किशोर, किशोरियों तक पहुँचाते हैं। जीवनवृक्ष के मूल को सींच कर जीवन को हराभरा बनाने के लिए 'यौवन सुरक्षा' एवं 'नारीधर्म' जैसी बापू की अनमोल पुस्तकें और ब्रह्मचर्यरक्षक बूटी का प्रचार प्रसार करते हैं। आश्रम के उन्नत साधक शालाओं तथा गाँवों में विद्यार्थी तालीम शिविर का भी आयोजन करते हैं जो एक सुन्दर भावी भारत के निर्माण में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग अदा करेगा। सत्साहित्य के प्रचार प्रसार के लिए आश्रम के साधक निरन्तर प्रचारवानों में प्रवासरत रहते हैं और आज के उबलते हुए, तीनों तापों से तप्त मानव समुदाय को पूज्य बापू की अमृतमय प्रसादी पहुँचाते हैं। यह निष्काम सेवा सचमुच ही अनोखी है। पूज्य बापू के उपदेशामृत के सुवाक्य और संदेश से आकर्षक लगती नोटबुक शालाओं में विद्यार्थियों को राहत दर से दी जाती हैं। गत वर्ष चार पाँच लाख नोटबुकों की संख्या थी। इस वर्ष बढ़ाकर छः से सात लाख तक होगी। विदेश में भी लोग इस तरह से समितियों का लाभ लेते हैं।

## (३) पिछड़े हुए तथा आदिवासी क्षेत्रों में सेवा प्रवृत्तियाँ

सामान्य अवसरों पर और मुख्यतः भयंकर दुष्काल के विकट समय में गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में रहनेवाली गरीब प्रजा को राहत मिले इसके लिए उन्हें किसी केन्द्र के स्थल पर एकत्रित कर समूहभोज कराया जाता है। तैयार कपड़ों तथा छाछ का वितरण कराया जाता है। अत्यन्त खराब परिस्थिति वाले लोगों को अनाज, गुड़ आदि कच्चा सामान तथा चप्पल आदि वितरित किये जाते हैं।

अन्न-वस्त्रदान एवं समूहभोज के प्रसंगों पर भारत के इस सुविख्यात महान तत्त्ववेत्ता, करुणासिंधु परम पूज्य बापू इस ग्रामीण तथा वनवासी जनता के बीच ही उपस्थित रहते हैं और उनकी ही भाषा में हरिचर्चा-कीर्तन आदि के द्वारा सत्संग अमृत की मधुर सुगंध से उन्हें युक्त करते हैं। बाहर से अन्न वस्त्र से तृप्त हुए इन लोगों को सत्संग में दिव्य अमृत का पान करने की तत्परता देखकर आश्रम की यह सेवाप्रवृत्ति सार्थकता का संतोष अनुभव करती है। अन्न-वस्त्रदान के साथ ज्ञानदान के ऐसे बड़े बड़े कार्यक्रम राजस्थान के उदयपुर जिले में भीमाणा गाँव में, डुंगरपुर के ओबरी गाँव में, हिम्मतनगर के कोटड़ा गाँव में तथा मध्यप्रदेश के झाबुआ तथा राणापुर आदि स्थलों पर आयोजित किये गये हैं। इन केन्द्रस्थ गाँवों से आसपास के ४०-५० कि.मी. के क्षेत्र में रहती आदिवासी जनता ने इस महायज्ञ का लाभ लिया था।

अहमदाबाद, सुरत तथा पंचेड़ आश्रमों के द्वारा साधकों को मौनमंदिर में रहकर साधन-भजन करने की सुविधाएँ दी जाती हैं। ऊपरोक्त आश्रमों में निःशुल्क आयुर्वेदिक चिकित्सालय साधकों द्वारा चलाये जाते हैं तथा उपसमितियों द्वारा अनेक सत्प्रवृत्तियाँ तथा साप्ताहिक सत्संग-कीर्तन के कार्यक्रम आयोजित किये

जाते हैं। पूज्य बापू के जन्मदिन पर योग वेदान्त सेवा समितियाँ गाँव गाँव बालभोज तथा स्कूलों में प्रसाद, पुस्तकें, चोकलेट आदि वितरण करती हैं। महापुरुष का संदेश सुनाकर तत्पर एवं तेजस्वी छात्र बनने का बोध करते हैं। संस्था की सभी प्रवृत्तियों का वर्णन तो असंभव ही है किन्तु इतना तो स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि एक दिन ये सत्प्रवृत्तियाँ और आश्रम भारत को विश्वभर में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कराने में सहायभूत होंगे।

*

**"महाराजश्री के श्रीचरणों में बैठने का मौका मिलता है तो बहुत ऊर्जा मिलती है। उनके प्रवचन से हमें संतोष और शक्ति प्राप्त होती है।" — श्री सुंदरलाल पटवा मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश शासन।**

**"पूज्यपाद आसारामजी महाराज जैसे दिव्य शक्तिसम्पन्न संत पधारें और हमको आध्यात्मिक शान्ति का पान कराकर जीवन की अन्धी दौड़ से छुड़ावें, ऐसे प्रसंग कभी-कभी ही प्राप्त होते हैं। वे लोगों को आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत करने की कलाएं और योगसाधना की युक्तियाँ बताते हैं। ऐसे महान संत के दरबार में वही पहुँच सकता है, जिसके पुण्यों का उदय हुआ हो, ईश्वर का अनुग्रह हुआ हो।"**

**— श्री मोतीलाल वोरा**
**भूतपूर्व मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश**

*

---

(पेज नंबर १६ से चालू...)

विश्व के श्रेष्ठतम कवि थे। वे भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के पूर्ण प्रतीक थे। भारत की संस्कृति कालिदास की वाणी में बोलती है। उनकी अमर कलाकृतियाँ 'मेघदूत' एवं 'शाकुन्तलम्' राष्ट्र का गौरव बन चुकी हैं। नवरस - गर्भित 'शाकुन्तलम्' का रसास्वादन जब जर्मनी के प्रसिद्ध कवि मि. गेट्टे ने किया तो वह मारे आनन्द के इस अद्भुत कलाकृति को सिर पर रखकर सड़कों पर नाच उठा था। विश्व के प्रसिद्ध कलाविशारदों ने इस ग्रन्थ की मुक्तकण्ठ से भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उज्जयिनी का स्वर्णिम इतिहास असंख्य रंग-बिरंग पुष्पों द्वारा भरा पड़ा है और उनकी सौरभ उड़-उड़कर संपूर्ण विश्व के इतिहास में छा गई है। उपरोक्त कतिपय रत्नों के अलावा उज्जयिनी की गौरवशाली गाथाओं में योगीराज भर्तृहरि, महाविद्वान राजा भोज, सम्राट अशोक, महान चंद्रगुप्त मौर्य, खगोल शास्त्रज्ञ महाराजा जयसिंह एवं जीवन्मुक्त राजा शिखरध्वज एवं उनकी योगिनी रानी चुड़ाला की अमर कथाएँ आज भी यहाँ के जन-जन के हृदय में गूँज रही हैं।

निश्चय ही अपने देदीप्यमान इतिहास एवं गौरवमयी परंपराओं के कारण उज्जयिनी जैसा अन्य कोई भी नगर प्राचीन काल में पश्चिमी भारत में नहीं था।

*

---

(पेज ४८ से चालू...)

थोड़ी-थोड़ी भूलें एकत्रित होकर क्रूर आदमी को अति क्रूर और नर-राक्षस बना देती हैं। इसके ठीक विपरीत थोड़ी थोड़ी सज्जनता उसे साधु के स्वरूप में परिवर्तित कर देती है। वही सज्जनता आत्मविकास साधते हुए परमात्मा से संयोग प्राप्त करने का सफल निमित्त भी साबित हो जाती है।

जल की बूँदें, कितनी तुच्छ हैं दीखने में, मगर वे ही नन्हीं-सी बूँदें एक दूसरे से मिल-मिलकर सागर का विराट स्वरूप ग्रहण कर लेती हैं। ठीक उसी प्रकार जलबिंदुवत् आपका थोड़ा-सा सत्संग आगे चलकर आपको महान संतत्व प्रदान करा देता है। अत: उचित यह है कि हम आप सत्संग का आश्रय ग्रहण करें।

*

# सच्ची साधना

स्वामी विवेकानंद के पास एक युवक आया। उसने कहा : "मैं सत्य को, ईश्वर को पाना चाहता हूँ। मैंने बहुत लेक्चर सुने, थियोसोफिकल सोसायटी में गया, वहाँ के सिद्धांत सुने। वहाँ का जो मास्टर था, उसका मैंने खूब पूजन किया, सत्कार किया। वर्षों बीत गये मगर मुझे अभी शांति नहीं मिली। मेरे चित्त में वही चंचलता और विकार जारी हैं। मैं वैसे का वैसा अशांत हूँ। मुझे कोई अनुभूति, कोई रस, कोई आनंद आज तक नहीं आया। उसके बाद मैंने साधना करनेवाले किसी योगी की शरण ली। योगी ने कहा : 'कमरा बंद करके बिल्कुल अंधकार में सुन्न होकर बैठे रहो। कुछ चिंतन न करो।' उपाय तो बढ़िया था। मैं सुन्न होकर चिंतन न करने की कोशिश करते हुए अंधकारयुक्त कमरे में नियम से बैठता हूँ। अभी भी मेरा यह नियम चालू है। आप से बात करने के बाद संध्या के समय में उसी कमरे में बंद हो जाऊँगा। सुनसान बैठूँगा। मगर इसमें भी आठ नौ महीने गुजर गए। मुझे कोई अनुभूति नहीं हो रही है। कोई शांति नहीं मिल रही है। दुनिया ऐसी ही है। लोग भी स्वार्थी हैं। माया का विस्तार बड़ा प्रबल है। सब जगह झंझट है। कुटुंबी भजन करने नहीं देते।"

इस प्रकार का वह निवेदन किये जा रहा था।

विवेकानंदजी ने कहा : "इतने वर्ष थियोसोफीवाले मास्टर के निर्देशों में गुजरे। इतने महीने तूने एकांत कमरे में बिताये, तुझे कोई अनुभूति नहीं हुई। तो डरने की कोई बात नहीं है। चिंता की कोई बात नहीं है। अब तो जिन मानवदेहों में प्रकट स्वरूप महेश्वर विराजमान है उन दीन दुःखियों की सेवा कर। मगर 'ये दीन दुःखी हैं और मैं दाता हूँ' ऐसा भाव दिल में न रख। यही देख कि दीन-दुःखी का स्वांग लेकर मेरा नारायण बैठा है। मुहताजों को सहायरूप हो जा। भक्तों को सहायरूप हो जा। जो पवित्र संत हों उनमें अपने ईश्वर को निहारने की आँख खोल दे। अहोभाव से भर जा। बंद कमरे की साधना छोड़। अब खुले विश्व में आ जा। सारा विश्व ईश्वर से ओतप्रोत है, अपनी निगाह बदल दे। निगाहों में ईश्वरभाव भर दे। तू जिससे मिले उसे ईश्वर से कम नहीं परंतु अनेक रूपों में वह भी ईश्वर का ही एक रूप है ऐसा मान। एक ही ईश्वर अनेक रूपों में प्रकट हो रहा है, कहीं सत्त्व रूप में, कहीं रज रूप में, कहीं तम रूप में। नाम और रूप विभिन्न दिखते हैं, मगर नाम और रूप को सत्ता देनेवाला वह अनामी अरूप मेरा ही सर्वेश्वर है। ऐसा भाव प्रकट कर।

हजारों हजारों भारतवासी दुर्बल विचारों में पीड़े जा रहे हैं, दबे जा रहे हैं, सरकार शोषण किये जा रही है और जिनमें बोलने की हिंमत तक नहीं है ऐसे दबे मानस में विचारों की, शक्ति की, दिव्यता की फूँक मारता जा और जो मुहताज हैं उनको तेरे पास कुछ हो तो दे एवं जो रुग्ण हैं उनकी सेवा में लग जा। यही साधना मैं तुझे बताता हूँ। इससे तू शीघ्र ही लाभान्वित होगा। जिनकी सेवा तू करेगा, उनको तो बाह्य वस्तुओं का, सुविधाओं का अल्प लाभ होगा परंतु तेरा अंतरात्मा अपने स्वरूप में प्रकट होगा।"

> **जो पवित्र संत हों उनमें अपने ईश्वर को निहारने की आँख खोल दे । अहोभाव से भर जा। बंद कमरे की साधना छोड़ । अब खुले विश्व में आ जा । सारा विश्व ईश्वर से ओतप्रोत है । अपनी निगाह बदल दे । निगाहों में ईश्वरभाव भर दे । तू जिससे मिले उसे ईश्वर से कम नहीं परंतु अनेक रूपों में वह भी ईश्वर का ही एक रूप है ऐसा मान ।**

सुख लेने की वासना को मिटाने के लिए सुख देने की शुरुआत कर दो। मान लेने की वासना को मिटाने के लिए मान देने की शुरुआत कर दो। भोग भोगने की वासना से बचने के लिए आत्म-नियंत्रण का व्रत ले लो।

*

# हरिनाम कीर्तन-कल्पतरु

भगवन्नाम अनन्त माधुर्य, ऐश्वर्य और सुख की खान है। नाम और नामी की अभिन्नता है। नाम-जप करने से जापक में नामी के स्वभाव का प्रत्यारोपण होने लगता है और जापक के दुर्गुण, दोष, दुराचार मिटकर दैवी संपत्ति के गुणों का आधान एवं नामी के लिए उत्कट प्रेम-लालसा का विकास होता है। भगवन्नाम, इष्टनाम एवं गुरुनाम के जप एवं कीर्तन से अनुपम पुण्य प्राप्त होता है। तुकारामजी कहते हैं : "नाम लेने से कण्ठ आर्द्र और शीतल होता है। इन्द्रियाँ अपना व्यापार भूल जाती हैं। यह मधुर सुन्दर नाम अमृत को भी मात करता है। इसने मेरे चित्त पर अधिकार कर लिया है। प्रेमरस से शरीर की कान्ति को प्रसन्नता और पुष्टि मिलती है। यह नाम ऐसा है कि इससे क्षणमात्र में त्रिविध ताप नष्ट हो जाते हैं। हरि-कीर्तन में प्रेम ही प्रेम भरा है। दुष्ट बुद्धि सब नष्ट हो जाती है और हरि-कीर्तन में समाधि लग जाती है।"

तुलसीदासजी कहते हैं :

**नाम लेत मंगल दिसि दसहुँ।**

तथा

**नाम लेत भवसिंधु सुखाहिं।**
**करहुँ विचार सुजन मन माँहि॥**
**वेद - पुरान संत मत एहू।**
**सकल सुकृत फल नाम सनेहू॥**

बृहन्नारदीय पुराण में कहा है :

**संकीर्तनध्वनिं श्रुत्वा ये च नृत्यन्ति मानवाः।**
**तेषां पादरजस्पर्शान्सद्यः पूता वसुन्धरा॥**

*'जो भगवन्नाम की ध्वनि को सुनकर प्रेम में तन्मय होकर नृत्य करते हैं, उनकी चरणरज से पृथ्वी शीघ्र ही पवित्र हो जाती है।'*

श्रीमद् भागवत् के अंतिम श्लोक में भगवान वेदव्यास कहते हैं :

**नामसंकीर्तनं यस्य सर्वपापप्रणाशनम्।**
**प्रणामो दुःखशमनस्तं नमामि हरिं पदम्॥**

*'जिस भगवान का नाम-संकीर्तन पापनाशक है, और प्रणाम दुःखनाशक है उस श्रेष्ठ भगवान को नमस्कार करता हूँ।'* *(१२/१३/२३)*

एक बार नारदजी ने भगवान ब्रह्माजी से कहा कि : "ऐसा कोई उपाय बतलाइये जिससे मैं विकराल कलिकाल के जाल में न आऊँ।" इसके उत्तर में ब्रह्माजी ने कहा :

**आदिपुरुषस्य नारायणस्य नामोच्चारणमात्रेण निर्धूत कलिर्भवति।**

*'आदिपुरुष भगवान नारायण के नामोच्चार करने मात्र से ही मनुष्य कलि से तर जाता है।'*

(कलिसंवरणोपनिषद्)

पद्मपुराण में आया है :

**ये वदन्ति नरा नित्यं हरिरित्यक्षरद्वयम्।**
**तस्योच्चारणमात्रेण विमुक्तास्ते न संशयः।**

*'जो मनुष्य परमात्मा के दो अक्षरवाले हरि नाम का उच्चारण करता है उसके उच्चारण मात्र से वह मुक्त हो जाता है इसमें शंका नहीं है।'* (पद्मपुराण)

भगवान के कीर्तन की प्रणाली अति प्राचीन है। चैतन्य महाप्रभु ने सामूहिक उपासना, संकीर्तन प्रणाली चलायी। इनके कीर्तन में जो भी सम्मिलित होते वे आत्मविस्मृत हो जाते, आनन्दावेश की गहरी अनुभूतियों में डूब जाते और आध्यात्मिक रूप से परिपूर्ण एवं असीम कल्याण तथा आनन्द के क्षेत्र में पहुँच जाते थे। श्री गौरांग द्वारा प्रवर्तित नामसंकीर्तन ईश्वरीय ध्वनि का एक बड़ा ही महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक रूप है। इसका प्रभाव क्षणभंगुर नहीं है। वह न केवल इन्द्रियों को ही सुखद है, वरं अंतःकरण पर सीधा, प्रबल और शक्तियुक्त प्रभाव डालता है। मनुष्य, नर-नारी ही नहीं, मृग, हाथी एवं हिंसक पशु, व्याघ्र आदि भी इनके कीर्तन में तन्मय हो जाते थे। वेदों के गान में पवित्रता एवं वर्णोच्चार, छन्द और व्याकरण के नियमों का कड़ा ख्याल रखना पड़ता है अन्यथा उद्देश्य भंग होकर उलटा परिणाम लाता है। परंतु नाम-संकीर्तन में विविध प्रकार की उपरोक्त सावधानी की आवश्यकता नहीं है। शुद्ध या अशुद्ध, सावधानी या असावधानी से किसी भी प्रकार भगवन्नाम लिया जाय, उससे चित्तशुद्धि, पापनाश एवं परमात्म-प्रेम की वर्षा होगी ही।

कीर्तन तीन प्रकार से होता है : व्यास पद्धति, नारदीय पद्धति और हनुमत् पद्धति। हनुमत् पद्धति में भक्त भगवद् आवेश में नामगान करते हुए, उछलकूद मचाते हुए नामी में तन्मय हो जाता है। नारदीय पद्धति में चलते फिरते हरिगुण गाते जायें और साथ में अन्य भक्तलोग में शामिल

हो जायें। व्यास पद्धति में वक्ता व्यासपीठ पर बैठकर श्रोताओं को अपने साथ कीर्तन करायें। श्री गोरांग चैतन्य की कीर्तन प्रणाली नारदीय एवं व्यास पद्धति का संमिश्रण स्वरूप थी। चैतन्य के सुस्वर के पीछे भक्त गण नाचते, गाते, स्वर झेलते हुए हरि-कीर्तन करते थे। परंतु चैतन्य के पहले भी अनादि काल से यह कीर्तन-प्रणाली चली आ रही है। परमात्मा के श्रेष्ठ भक्त सदैव कीर्तनानंद का रसास्वादन लेते रहते हैं। पद्मपुराण के भागवत माहात्म्य में आता है कि :

**प्रहलादस्तालधारी तरलगतितया चोद्धवः कांस्यधारी।**
**वीणाधारी सुरर्षिः स्वरकुशलतया रागकर्तार्जुनोऽभूत्।**
**इन्द्रोवादीन्मृदंगः जयजयसुकराः कीर्तने ते कुमारा।**
**यत्राग्रे भाववक्ता सरसरचनया व्यासपुत्रो बभूव॥**

*'ताल देने वाले प्रहलाद थे, उद्धव मंजीरा-झांझ बजाते थे, नारदजी वीणा लिये हुए थे, अच्छा स्वर होने के कारण अर्जुन गाते थे, इन्द्र मृदंग बजाते थे, सनक-सनन्दन आदि कुमार जय-जय ध्वनि करते थे और शुकदेवजी अपनी रसीली रचना से रस और भावों की व्याख्या करते थे।'*

(पद्मपुराण का भागवत माहात्म्य : ६.८७)

उक्त सब मिलकर एक भजन मंडली बनाकर हरि-गुणगान करते थे।

यह भगवन्नाम कीर्तन ध्यान, तपस्या, यज्ञ या सेवा से किंचित् भी निम्नमूल्य नहीं है।

**कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।**
**द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात्॥**

*'सतयुग में ध्यान से, त्रेता में यज्ञ से और द्वापर में भगवान की पूजा से जो फल मिलता था, वह सब कलियुग में भगवान के नाम-कीर्तन मात्र से ही प्राप्त हो जाता है।'*

(श्रीमद् भागवत : १२.३.५२)

भगवान श्रीकृष्ण उद्धव को एकादश स्कंध में कहते हैं कि बुद्धिमान लोग कीर्तन-प्रधान यज्ञों के द्वारा भगवान का भजन करते हैं।

**यज्ञैः संकीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः।**

(श्रीमद् भागवत : ११.५.३२)

गरूड़पुराण में उपदिष्ट है कि :

**यदीच्छसि परं ज्ञानं ज्ञानाच्च परमं पदम्।**
**तदा यत्नेन महता कुरु श्रीहरिकीर्तनम्॥**

*'यदि आत्मज्ञान की इच्छा है और आत्मज्ञान से परम पद पाने की इच्छा है, तो यत्नपूर्वक श्रीहरिनाम का कीर्तन करो।'*

**हरे राम हरे कृष्ण कृष्ण कृष्णेति मंगलम्।**
**एवं वदन्ति ये नित्यं न हि तान् बाधते कलिः॥**

*'हरे राम! हरे कृष्ण! कृष्ण! कृष्ण! ऐसा जो सदा कहते हैं उन्हें कलियुग हानि नहीं पहुँचा सकता।'*

(पद्मपुराण : ४.८०. २-३)

**यन्नामकीर्तनं भक्त्या विलापनमनुत्तमम्।**
**मैत्रेयाशेषपापानां धातूनामिव पावकः॥**

*'जैसे अग्नि सुवर्ण आदि धातुओं के मल को नष्ट कर देती है, ऐसे ही भक्ति से किया गया भगवान का कीर्तन सब पापों के नाश का अत्युत्तम साधन है।'*

पाश्चात्य विज्ञानी डॉ. डायमंड अपने जीववैज्ञानिक प्रयोगों के पश्चात् जाहिर करता है कि पाश्चात्य रोक संगीत, पोप संगीत एवं डिस्को डान्स से उसमें सम्मिलित होनेवाले और सुननेवाले दोनों की जीवनशक्ति क्षीण होती है। जबकि भारतीय शास्त्रीय संगीत एवं हरिकीर्तन से जीवनशक्ति का शीघ्र एवं महत्तर विकास होता है। यह हरि-कीर्तन हमारे ऋषि-मुनि-संतों ने हमें आनुवांशिक परंपराओं के रूप में प्रदान किया है और यह भोग-मोक्ष दोनों का देनेवाला है।

जापान में एक्युप्रेशर थेरापी का विकास हुआ। उसके अनुसार हाथ-पाँव में शरीर के प्रत्येक अंग के लिए एक निश्चित बिंदु है, जिसे दबाने से उस उस अंग का आरोग्य-लाभ होता है। हमारे गाँव-गाँव के छोटे-बड़े नरनारी यह कहाँ से सीखते? आज जो वैज्ञानिकों ने खोजबीन करके बताया वह हजारों लाखों साल पहले हमारे ऋषि-मुनि महर्षियों ने सामान्य परंपरा के रूप में पढ़ा दिया कि हरि-कीर्तन करने से तन-मन का स्वास्थ्य और पापनाश होता है। हमारे शास्त्रों की पुकार हरि-कीर्तन के बारे में इसीलिए है ताकि सामान्य से सामान्य नर-नारी, आबालवृद्ध, सब ताली बजाते हुए कीर्तन करें, भगवद् भाव में नृत्य करें, एक्युप्रेशर थेरापी अनायास ही फलदायक बने, प्राणों का ताल बने (तालबद्ध प्राणायाम से आयुष्य बढ़ती है।) और मन के विकार, दुःख, शोक आदि का नाश हो, हरि रस रूपी अमृत पीवें।

तुलसीदासजी ने तभी कहा है :

**रामनाम की औषधि खरी नियत से खाय।**
**अंगरोग व्यापे नहीं महारोग मिट जाय॥**

श्रीमद् भागवत में भगवान ने कहा है कि :

**वाग् गद्‌गदा द्रवते यस्य चित्तं।**
**रुदत्यभीक्ष्णं हसति क्वचिच्च।**
**विलज्ज उद्‌गायति नृत्यते च।**
**मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति॥**

*'जिसकी वाणी गद्‌गद् हो जाती है, जिसका चित्त द्रवित हो जाता है, जो बार-बार रोने लगता है, कभी हँसने लगता है, कभी लज्जा छोड़कर उच्च स्वर से गाने लगता है, कभी नाचने लगता है ऐसा मेरा भक्त समग्र संसार को पवित्र करता है।'*

*इससे रसना को सरस भगवद्-प्रेम में तन्मय करते हुए जैसा आए वैसा ही भगवन्नाम के कीर्तन में संलग्न होना चाहिए।*

**तुलसी अपने राम को रीझ भजो या खीज।**
**भूमि फेंके उगेंगे उलटे सीधे बीज॥**

गुरु नानक कहते हैं कि हरिनाम का आह्लाद अलौकिक है।

**भाँग तमाखू छूतरा उतर जात परभात।**
**नाम खमीरी नानका चढ़ी रहे दिन रात॥**

नाम-जप-कीर्तन की इतनी भारी महिमा है कि वेद, पुराण, आगम, निगम, संस्कृत, प्राकृत सब ग्रंथों में भगवन्नाम कीर्तन की महिमा गायी गई है। यह भगवन्नाम जिन भगवान के विशेष विग्रह को लक्ष्य करके किया जाता है वह तो कभी का पंचभूतों में विलीन हो चुका। फिर भी भक्त की भावना और शास्त्रों की प्रतिज्ञा है कि राम, कृष्ण, हरि आदि नामों का कीर्तन करने से अनंत फल मिलता है। तो जो सद्‌गुरु 'लीला-विग्रह रूप, हाजराहजूर, जागंदि ज्योत' हैं उनके नाम का कीर्तन, उनके नाम का उच्चारण करने से पापनाश एवं असीम पुण्यपुंज की प्राप्ति हो इसमें क्या आश्चर्य है?

कबीरजी ने इस युक्ति से निश्चय ही अपना कल्याण किया था। कबीरजी ने गुरुमंत्र कैसे प्राप्त किया और शीघ्र सिद्धि-लाभ कैसे किया उसके संदर्भ में रोचक कथा है :

## कबीरजी की मंत्रदीक्षा

उस समय काशी में रामानन्द स्वामी बड़े उच्च कोटि के महापुरुष माने जाते थे। कबीरजी ने उनके आश्रम के मुख्य द्वार पर आकर विनती की : "मुझे गुरुजी के दर्शन कराओ।"

उस समय जात-पांत का बड़ा आग्रह रहता था। और फिर काशी! पण्डितों और पण्डे लोगों का अधिक प्रभाव था। कबीरजी किसके घर में पैदा हुए थे, हिन्दू के या मुस्लिम के, कुछ पता नहीं था। एक जुलाहे को रास्ते में किसी पेड़ के नीचे से मिले थे। उसने पालन-पोषण करके कबीरजी को बड़ा किया था। जुलाहे के घर बड़े हुए तो जुलाहे का धन्धा करने लगे। लोग मानते थे कि वे मुसलमान की संतान हैं।

द्वारपालों ने कबीरजी को आश्रम में जाने नहीं दिया। कबीरजी ने सोचा कि पहुँचे हुए महात्मा से अगर गुरुमंत्र नहीं मिलता तो मनमानी साधना से 'हरिदास' बन सकते हैं, 'हरिमय' नहीं बन सकते। कैसे भी करके रामानन्दजी महाराज से मंत्रदीक्षा लेनी है।

कबीरजी ने देखा कि हररोज सुबह तीन चार बजे स्वामी रामानन्दजी खड़ाउ पहनकर 'टप... टप...' आवाज करते हुए गंगा में स्नान करने जाते हैं। कबीरजी ने गंगा के घाट पर उनके जाने के रास्ते में सब जगह बाड़ कर दी और एक ही मार्ग रखा। उस मार्ग में सुबह के अन्धेरे में कबीरजी सो गये। गुरु महाराज आये तो अन्धेरे के कारण कबीरजी पर पैर पड़ गया। उनके मुख से उद्‌गार निकल पड़े : 'राम... राम... !'

कबीरजी का तो काम बन गया। गुरुजी के दर्शन भी हो गये, उनकी पादुकाओं का स्पर्श एवं मुख से राम मंत्र भी मिल गया। अब दीक्षा में बाकी ही क्या रहा? कबीरजी नाचते, गुनगुनाते घर वापस आये। रामनाम की और गुरुदेव के नाम की रट लगा दी। अत्यंत स्नेहपूर्ण हृदय से गुरुमंत्र का जप करते, गुरुनाम का कीर्तन करते साधना करने लगे। दिनोदिन उनकी मस्ती बढ़ने लगी।

जो महापुरुष जहाँ पहुँचे हैं वहाँ की अनुभूति उनका भावपूर्ण हृदय से चिन्तन करनेवाले को भी होने लगती है।

काशी के पण्डितों ने देखा कि यवन का पुत्र कबीर रामनाम जपता है, रामानन्द के नाम का कीर्तन करता है। उस यवन को रामनाम की दीक्षा किसने दी? क्यों दी?

मंत्र को भ्रष्ट कर दिया! पण्डितों ने कबीर से पूछा :

"रामनाम की दीक्षा तेरेको किसने दी?"

"स्वामी रामानन्दजी महाराज के श्रीमुख से मिली।"

"कहाँ दी?"

"सुबह गंगा के घाट पर।"

पण्डित पहुँचे रामानन्दजी के पास : "आपने यवन को राममंत्र की दीक्षा देकर मंत्र को भ्रष्ट कर दिया, सम्प्रदाय को भ्रष्ट कर दिया। गुरु महाराज! यह आपने क्या किया?"

गुरु महाराज ने कहा : "मैंने तो किसीको दीक्षा नहीं दी।"

"वह यवन जुलाहा तो 'रामानन्द... रामानन्द... मेरे गुरुदेव रामानन्द...' की रट लगाकर नाचता है, आपका नाम बदनाम करता है।"

"भाई! मैंने तो उसको कुछ नहीं कहा। उसको बुलाकर पूछा जाय। पता चल जायगा।"

काशी के पण्डित इकट्ठे हो गये। जुलाहा सच्चा कि रामानन्दजी सच्चे यह देखने के लिए भीड़ हो गई। कबीरजी को बुलाया गया। गुरु महाराज मंच पर विराजमान हैं। सामने विद्वान पण्डितों की सभा मिली है।

रामानन्दजी ने कबीरजी से पूछा : "मैंने तुझे कब दीक्षा दी? मैं कब तेरा गुरु बना?" कबीर बोले : "महाराज! उस दिन प्रभात को आपने मुझे पादुका स्पर्श कराया और राममंत्र भी दिया, वहाँ गंगा के घाट पर।"

रामानन्द स्वामी ने कबीर के सिर पर मृदु खड़ाउ मारते हुए कहा : "राम... राम... राम... मुझे झूठा बनाता है? गंगा के घाट पर कब मैंने तुझे दीक्षा दी थी?"

कबीरजी बोल उठे : "गुरु महाराज! तब की दीक्षा झूठी तो अब की तो सच्ची...! मुख से रामनाम का मंत्र भी मिल गया और सिर में आपकी पावन पादुका का स्पर्श भी हो गया।"

स्वामी रामानन्दजी उच्च कोटि के संत-महात्मा थे। पण्डितों से कहा : "चलो, यवन हो या कुछ भी हो, मेरा पहले नम्बर का शिष्य यही है।"

ब्रह्मनिष्ठ सत्पुरुषों की विद्या या दीक्षा प्रसाद खाकर मिले तो भी बेड़ा पार करती है और मार खाकर मिले तो भी बेड़ा पार कर देती है।

इस प्रकार कबीरजी ने गुरुनाम कीर्तन से अपनी सुषुप्त शक्तियाँ जगायीं और शीघ्र आत्मकल्याण किया।

धनभागी हैं ऐसे गुरुभक्त जो दृढ़ता और तत्परता से कीर्तन-ध्यान-भजन करके अपना जीवन धन्य करते हैं, कीर्तन से समाज में सात्त्विकता फैलाते हैं, वातावरण में शुद्धि और अपने तन-मन की शुद्धि करनेवाला हिरनाम का कीर्तन सड़कों पर खुले आम नाचते गाते हुए करते हैं।

दुनिया का सब कुछ धन, यश कमा लिया जाय या प्रतिष्ठा के सुमेरु पर स्थित हुआ जाय, वेद-वेदांग शास्त्र के रहस्य भी जान लिए जायँ, उन सब श्रेष्ठ उपलब्धियों से भी गुरुशरणागति एवं गुरु-चरणों की भक्ति श्रेष्ठ है।

इसके विषय में आद्य शंकराचार्य कहते हैं कि :

**मनश्चेत् न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे।**
**ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम्॥**

अगर गुरु के श्रीचरणों में मन न लगा, तो फिर क्या? इन सबसे क्या? कौन-सा परमार्थ सिद्ध हुआ?

**कलियुग में केवल नाम आधारा।**

क्यों न इस कलिकालचिंतामणि हिर-गुरुनाम-कीर्तन कल्पतरु का विशेष फ़ायदा उठाया जाय?

*

श्रीमद् आद्य शंकराचार्यविरचितम्

## ॥ गुर्वष्टकम्॥

शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं
यशश्चारु चित्रं धनं मेरुतुल्यम्।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥१॥

*यदि शरीर रूपवान हो, पत्नी भी रूपसी हो और सत्कीर्ति चारों दिशाओं में विस्तरित हो, मेरु पर्वत के तुल्य अपार धन हो, किन्तु गुरु के श्रीचरणों में यदि मन आसक्त न हो तो इन सारी उपलब्धियों से क्या लाभ?*

कलत्रं धनं पुत्रपौत्रादि सर्वं
गृहं बान्धवाः सर्वमेतद्धि जातम्।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥२॥

*सुन्दरी पत्नी, धन, पुत्र-पौत्र, घर एवं स्वजन आदि प्रारब्ध से सर्व सुलभ हो किन्तु गुरु के श्रीचरणों में मन*

*की आसक्ति न हो तो इस प्रारब्ध-सुख से क्या लाभ?*

षडंगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या
कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥३॥

*वेद एवं षट्वेदांगादि शास्त्र जिन्हें कंठस्थ हों, जिनमें सुन्दर काव्य-निर्माण की प्रतिभा हो, किन्तु उनका मन यदि गुरु के श्रीचरणों के प्रति आसक्त न हो तो इन सद्गुणों से क्या लाभ?*

विदेशेषु मान्यः स्वदेशेषु धन्यः
सदाचारवृत्तेषु मत्तो न चान्यः।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥४॥

*जिन्हें विदेशों में समादर मिलता हो, अपने देश में जिनका नित्य जयजयकार से स्वागत किया जाता हो और जो सदाचारपालन में भी अनन्य स्थान रखता हो, यदि उसका भी मन गुरु के श्रीचरणों के प्रति अनासक्त हो तो इन सद्गुणों से क्या लाभ?*

क्षमामण्डले भूपभूपालवृन्दैः
सदा सेवितं यस्य पादारविन्दम्।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥५॥

*जिन महानुभाव के चरणकमल पृथ्वीमण्डल के राजा-महाराजाओं से नित्य पूजित रहा करते हों, किन्तु उनका मन यदि गुरु के श्रीचरणों में आसक्त न हो तो इस सद्भाग्य से क्या लाभ?*

यशो मे गतं दिक्षु दानप्रतापात्
जगद्वस्तु सर्वं करे सत्प्रसादात्।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥६॥

*दानवृति के प्रताप से जिनकी कीर्ति दिग्दिगन्तरों में व्याप्त हो, अति उदार गुरु की सहज कृपा-दृष्टि से जिन्हें संसार के सारे सुख-ऐश्वर्य हस्तगत हो, किन्तु उनका मन यदि गुरु के श्रीचरणों में आसक्तिभाव न रखता हो तो इन सारे ऐश्वर्यों से क्या लाभ?*

न भोगे न योगे न वा वाजिराजौ
न कान्तामुखे नैव वित्तेषु चित्तम्।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥७॥

*जिनका मन भोग, योग, अश्व, राज्य, स्त्रीसुख और धनोपभोग से कभी विचलित न हुआ हो, फिर भी गुरु के श्रीचरणों के प्रति आसक्त न बन पाया हो तो इस मन की अटलता से क्या लाभ?*

अरण्ये न वा स्वस्य गेहे न कार्ये
न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥८॥

*जिनका मन वन या अपने विशाल भवन में, अपने कार्य या शरीर में तथा अमूल्य भंडार में आसक्त न हो, पर गुरु के श्रीचरणों में भी यदि वह मन आसक्त न हो पाये तो उसकी सारी अनासक्तियों का क्या लाभ?*

अनर्घ्याणि रत्नादि मुक्तानि सम्यक्
समालिंगिता कामिनी यामिनीषु।
मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥९॥

*अमूल्य मणि मुक्तादि रत्न उपलब्ध हों, रात्रि में समालिंगिता विलासिनी पत्नी भी प्राप्त हो, फिर भी मन गुरु के श्रीचरणों के प्रति आसक्त न बन पाये तो इन सारे ऐश्वर्यभोगादि सुखों से क्या लाभ?*

गुरोरष्टकं यः पठेत्पुण्यदेही
यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही।
लभेत् वांछितार्थं पदं ब्रह्मसंज्ञं
गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम् ॥१० ॥

*जो यती, राजा, ब्रह्मचारी एवं गृहस्थ इस गुरु-अष्टक का पठन-पाठन करता है और जिसका मन गुरु के वचन में आसक्त है, वह पुण्यशाली शरीरधारी अपने इच्छितार्थ एवं ब्रह्मपद इन दोनों को सम्प्राप्त कर लेता है यह निश्चित है।*

*

**जो साधक या शिष्य गुरुकृपा प्राप्त होने के बाद भी उसका महत्त्व ठीक से न समझते हुए गहरा ध्यान नहीं करते, अन्तर्मुख नहीं होते और बहिर्मुख प्रवृत्ति में लगे रहते हैं वे मूर्ख हैं और भविष्य में अपने को अभागी सिद्ध करते हैं।**

# भारतीय संस्कृति विश्व की श्रेष्ठ संस्कृति

विश्व की चार प्राचीन संस्कृतियाँ हैं : चीन, मिस्र, ग्रीस और भारतीय संस्कृति। भारत की संस्कृति आज भी हमें गाँव-गाँव में देखने को मिलेगी ... हृदय की शांति देनेवाले प्रयोग बताती हुई पायी जायेगी। बाकी की तीन संस्कृतियाँ प्राचीन तो हैं लेकिन वे किसी गिरजाघर में या अजायबघर में कैद बनी हुई देखने को मिलेगी।

भारतीय संस्कृति अद्यापि पर्यंत जीवंत टिक रही है इसका कारण है इसके मुख्य पाँच स्तंभ : दर्शन, इतिहास, रीति-रिवाज, धर्म और वर्णाश्रम।

संस्कृति याने स्थूल वस्तु को सुसंस्कृत करके सूक्ष्मतर, सूक्ष्मतम वस्तु प्राप्त करने की प्रक्रिया।

विश्व की चार प्राचीन संस्कृतियों में से केवल भारतीय संस्कृति ही अभी तक स्थायी रह पायी है। हम तो यह मानते ही हैं लेकिन विश्व भर के अच्छे अच्छे विद्वान भी मानते हैं।

फ्रेन्च विद्वान केनो कहते हैं : "विश्व भर में केवल भारत के पास ही उत्कृष्ट परंपराएँ हैं जो सदियों तक जीवन्त रही हैं।'

**फ्रेन्च विद्वान केनो कहते हैं : "विश्व भर में केवल भारत के पास ही उत्कृष्ट परंपराएँ हैं जो सदियों तक जीवन्त रही हैं।"**

जर्मनी के विद्वान शोपनहार कहते हैं : "वेदान्त जैसा ऊर्ध्वगामी और उत्थानकारी दूसरा एक भी धर्म या तत्त्वज्ञान नहीं है।"

हमारी संस्कृति के पाँच स्तंभों में हमारी संस्कृति का इतिहास विशिष्ट है।

चार लाख बत्तीस हजार वर्ष बीतते हैं तब कलियुग, आठ लाख चौसठ हजार वर्ष बीतते हैं तब द्वापर युग, बार लाख छानवे हजार वर्ष बीतते हैं तब त्रेता युग और सत्रह लाख अट्ठाइस हजार वर्ष

**जर्मनी के विद्वान शोपनहार कहते हैं : "वेदान्त जैसा ऊर्ध्वगामी और उत्थानकारी दूसरा एक भी धर्म या तत्त्वज्ञान नहीं है।"**

बीतते हैं तब सतयुग ... इस प्रकार कुल मिलाकर तैंतालीस लाख बीस हजार वर्ष बीतते हैं तब एक चतुर्युगी मानी जाती है। ऐसे इकहत्तर चतुर्युगी बीतती हैं तब एक मन्वंतर और ऐसे चौदह मन्वंतर बीतते हैं तब एक कल्प होता है। अर्थात् एक हजार चतुर्युगी बीतती हैं तब एक कल्प याने ब्रह्माजी का एक दिन होता है। ऐसे ब्रह्माजी अभी ५० वर्ष पूरे करके ५१ वे वर्ष के प्रथम दिन के दूसरे प्रहर में हैं। अर्थात् सातवाँ मन्वन्तर, अट्ठाइस चतुर्युगी, कलियुग का प्रथम चरण। ५२१७ वर्ष बीत चुके हैं।

ऐसा इतिहास दूसरी किस संस्कृति में है?

श्राद्ध, परलोक, पितृलोक और स्वर्गलोक की खोज हमारी संस्कृति के उपासकों ने ही की है।

अमेरिका की खोज करनेवाला कोलंबस जन्मा नहीं था उससे पाँच हजार वर्ष पहले भारत का वीर अर्जुन स्वर्ग में से दिव्य अस्त्र लाया था, यह तो बच्चा बच्चा जानता है। उससे भी पहले खट्वांग राजा, राजा मुचकुन्द आदि स्वर्ग में जाकर आये थे।

अभी जो चन्द्र दिखता है वह चन्द्र मण्डल है। चन्द्रलोक उससे बहुत दूर है। सूर्य से भी चन्द्रलोक बहुत ऊपर है। औषधि पुष्ट करनेवाला अमृत चन्द्रलोक से आकर चन्द्रमण्डल के द्वारा बरसता है। उससे अन्न, वनस्पति, औषधियाँ पुष्ट होती हैं। केवल इतनी ही खोज नहीं, अतल, वितल, तलातल, रसातल, पाताल, सुतल, महातल तथा भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, तपलोक, जनलोक, महर्लोक और ब्रह्मलोक की खोज हमारी संस्कृति में ही हुई है।

हमारी संस्कृति का इतिहास खूब प्राचीन और दिव्य है। साथ ही साथ दर्शन याने जीवात्मा और परमात्मा की एकता का दर्शन हमारे ही दर्शनशास्त्र में है। जीव अपने परब्रह्म परमात्मा स्वरूप को

पहचानकर ब्रह्म के साथ एक और अभिन्न बनता है।

यु. एस. ए. के मार्कट्वेन कहते हैं : "धर्म के क्षेत्र में और सब देश दरिद्र हैं किन्तु भारत इस क्षेत्र में अरबोंपति है।"

**अमेरिका की खोज करनेवाला कोलंबस जन्मा नहीं था उससे पाँच हजार वर्ष पहले भारत का वीर अर्जुन स्वर्ग में से दिव्य अस्त्र लाया था, यह तो बच्चा बच्चा जानता है।**

हमारी संस्कृति में जब से मानवजाति का प्रारंभ हुआ है तब से लेकर अभी तक अपने सर्वांगीण विकास के लिए भिन्न भिन्न साधन हमारे दर्शनशास्त्र, धर्मग्रंथ, इतिहास और रीति-रिवाजों के द्वारा पाये जाते हैं। जैसेकि, दिवाली का पर्व आता है तो राग-द्वेष को भूल जाओ। चित्त में आनन्द और उत्साह तरंगायित बने इसलिए मिठाइयों का आदान-प्रदान करो। साथ ही साथ गरीब एवं असहायों को सहाय रूप बनो। अपने धन का सदुपयोग करके फूल जैसे हल्के बनो।

दिवाली के बाद आता है यशमय जीवन जीने की कला सिखानेवाला उत्तरायण पर्व। तिल-गुड़ के लड्डू खाओ और खिलाओ। शरीर में पुष्टि, मन में तुष्टि और व्यवहार में माधुर्य का सन्देश देनेवाला यह पर्व गया न गया कि शिवरात्रि का आगमन हुआ। संयम, मौन, उपवास, रात्रि-जागरण, पूजन आदि की व्यवस्था से, व्रत से पेट और नस-नाड़ियों के रोग निवृत्त होते हैं। प्रभु के जप-ध्यान से अपने आत्म-शिव का माधुर्य प्रकट होता है। मन-बुद्धि में पुण्य-संस्कार का सिंचन होता है। इस पुण्यपर्व के बाद आती है होली।

हमारी धर्म-व्यवस्था भी कैसी अद्भुत है!

**परहित सरीस धरम नहीं भाई।**
**परपीड़न सम नहीं अधमाई॥**

तथा—

**परोपकारः पुण्याय पापाय परपीड़नम्।**

हमारी संस्कृति में धर्म, रीति-रिवाज तथा दर्शनशास्त्र कितने महान हैं! जो भगवान इस सृष्टि का संचालन करता है वह साक्षात् स्वरूप में अंतर्यामी होकर हमारे हृदय में बैठा है, ऐसा हमारे धर्मग्रंथ गीता का उपदेश है।

हमारे धर्म की यह विशेषता है कि हरएक मानव को ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग सरलता से मिल सकता है। अलग अलग व्यक्तियों की अलग अलग योग्यता होती है। ऐसे लोग जगत में रहते हुए जगदीश्वर की अनुभूति कर सकें ऐसा उपदेश हमारे धर्मग्रंथों में से मिल जाता है।

जर्मन तत्त्वचिन्तक मैक्समूलर ने कहा : "इस पृथ्वी पर पूर्ण विकसित मानवप्रज्ञा कहाँ है और जीवन के बड़े बड़े प्रश्नों के हल किसने खोजे हैं ऐसा मुझसे पूछा जाए तो मैं उंगली उठाकर कहूँगा कि भारत ने ही खोजे हैं।"

परदेश के तत्त्वचिन्तक भी हमारी संस्कृति से बड़े प्रभावित हैं। हमारी संस्कृति विश्व भर की चार प्राचीन संस्कृतियों में सर्वश्रेष्ठ लगती है, जीवन्त लगती है इसमें कारणभूत पाँच अंग मुख्य हैं : दर्शनशास्त्र, धर्म, रीति-रिवाज, वर्णाश्रमव्यवस्था और इतिहास।

**मानव तुझे नहीं याद क्या तू ब्रह्म का ही अंश है।**
**कुल गोत्र तेरा ब्रह्म है सद्ब्रह्म का तू वंश है॥**

राजा जनक ने राजकाज करते हुए भी जीवन्मुक्त अवस्था प्राप्त की। शुकदेवजी महाराज ने सात दिन में परीक्षित को आत्मा-परमात्मा की मुलाकात करा दी। राजर्षि खट्वांग ने एक मुहूर्त में ही ईश्वर का साक्षात्कार किया। मीराबाई ने हमारी संस्कृति के मुताबिक रोहिदासजी

**हमारी संस्कृति का इतिहास खूब प्राचीन और दिव्य है। साथ ही साथ दर्शन याने जीवात्मा और परमात्मा की एकता का दर्शन हमारे ही दर्शनशास्त्र में है। जीव अपने परब्रह्म परमात्मा स्वरूप को पहचानकर ब्रह्म के साथ एक और अभिन्न बनता है।**

के मार्गदर्शन में साधना की, भक्ति की धारा जागृत की। उनकी अमृतमय दृष्टि ने विष को भी अमृत बना दिया।

**यु. एस. ए. के मार्कट्वेन कहते हैं : "धर्म के क्षेत्र में और सब देश दरिद्र हैं किन्तु भारत इस क्षेत्र में अरबोंपति है।"**

ज्ञान कहो या हमारी संस्कृति के भक्तिभाव का अमृत कहो... वह मानव के तन को तंदुरुस्त और मन को प्रफुल्लित करता है, बुद्धि को आत्मा-परमात्मा की एकता का राजमार्ग देता है।

'अनलहक' का उद्‌घोष करने के कारण मन्सूर को शूली पर चढ़ाया जाता है जबकि हमारी संस्कृति में 'अहं ब्रह्मास्मि' का अनुभव करनेवाले महापुरुषों की पूजा होती है।

सुकरात को जबरन विष दिया गया। शिवजी ने लोक-कल्याण हेतु स्वेच्छा से विष ग्रहण किया, कण्ठ में ही धारण किया और नीलकण्ठ होकर पूजे गये।

जिसस क्राइस्ट दुर्जनों के द्वारा मारे गये जबकि श्रीकृष्ण ने दुर्जनों को स्वधाम पहुँचा दिये।

किसी भी भाषा का व्यक्ति हमारी संस्कृति का थोड़ा भी अध्ययन करता है तो उसका सिर झुक जाता है, उसका हृदय अहोभाव से भर जाता है।

जिसके पास एकाग्रता का प्रसाद है वह किसी भी कार्य में अपना चित्त लगाता है तो सफल होता है। आप जिस ईश्वर को मानते हैं उसके समक्ष आँख की पुतली हिलाये बिना पाँच मिनट तक निहारते हुए बैठे रहें, आपको शान्ति मिलेगी। इससे आपको व्यवहार और परमार्थ में सहायता मिलेगी।

भारतीय संस्कृति में सब युक्तियाँ होने पर भी हमारे युवक और युवतियाँ पाश्चात्य पद्धतियों और साधनों से आकर्षित हो रहे हैं। इसमें उनका दोष नहीं है। वे भोले भाले स्वभाव के हैं। उभरता जीवन है। ऐसी उम्र में पता नहीं चलता कि यह अच्छा है और वह बुरा है। जो सामने आता है वह इन्द्रियों को आकर्षित कर लेता है। बेचारे युवक युवती उस आकर्षण में फिसल जाते हैं। बाकी भारतीय संस्कृति का थोड़ा भी अध्ययन कोई करता है, ध्यान का थोड़ा भी प्रसाद कोई पाता है, कीर्तन का थोड़ा भी रस कोई चखता है वह भारतीय संस्कृति का अमृतपान करता है और दूसरों को भी कराये बिना रह नहीं पाता।

**जो भगवान इस सृष्टि का संचालन करता है वह साक्षात् स्वरूप में अंतर्यामी होकर हमारे हृदय में बैठा है, ऐसा हमारे धर्मग्रंथ गीता का उपदेश है।**

पाश्चात्य जगत के प्रसिद्ध डॉ. डायमन्ड कहते हैं : "डिस्को डान्स से जीवन-शक्ति का ह्रास होता है और भारतीय रीति से कीर्तन करने से जीवन-शक्ति का विकास होता है।"

भारतीय संस्कृति में ऐसा अमृत है फिर भी जितना होना चाहिए उतना प्रचार नहीं हुआ है। दूसरी ओर इन्द्रियों को भड़कानेवाले दृश्य और साधनों का प्रचार प्रचुर मात्रा में हो रहा है। फलतः हमारे भोलेभाले हृदयवाले लोग उस आडम्बर से आकर्षित हो जाते हैं। बाकी हमारी संस्कृति निःसन्देह महान है। यह बात विश्व भर के सभी विद्वानों ने मानी है।

## युवानों को भारतीय संस्कृति के अभिमुख कौन कर सकता है और कैसे?

युवानों को भारतीय संस्कृति के अभिमुख वे ही कर सकते हैं जिनके जीवन में सदाचार और संयम हो, जीवन में भारतीय संस्कृति की सुवास हो और कोई अनुभूति हो।

स्वामी विवेकानन्द विद्यार्थी-काल में छत पर बैठकर अध्ययन कर रहे थे। सामनेवाली छत पर कोई युवती आयी। विवेकानन्द की दृष्टि सहज भाव से उधर गई। अपनी दृष्टि को मोड़कर विवेकानन्द वाचन में संलग्न हुए। उनका मन फिर से सौन्दर्य को निहारने का लालची

बना। विवेकानन्द सतर्क बने और मन को समझाया लेकिन मन बार-बार वहीं जाने लगा। विवेकानन्द तुरन्त नीचे आये और आँख में मिर्च भर दी। अपने आप से कहने लगे : "पड़ौसी बहन को कुदृष्टि से देखता है तो महान कैसे बनेगा?"

**जर्मन तत्त्वचिन्तक मैक्समूलर ने कहा : "इस पृथ्वी पर पूर्ण विकसित मानवप्रज्ञा कहाँ है और जीवन के बड़े बड़े प्रश्नों के हल किसने खोजे हैं ऐसा मुझसे पूछा जाए तो मैं उंगली उठाकर कहूँगा कि भारत ने ही खोजे हैं।"**

हमारा मन कितना भी बहिर्मुख हो गया हो, हमारी नैतिकता कितनी भी डावाँडोल हो गई हो फिर भी जिनके जीवन में सदाचरण हो ऐसे पुरुषों की वाणी से, उनके बताये हुए प्रयोग करने से हम ऊपर उठ सकते हैं। ऐसे महापुरुषों के संपर्क से हमारा ऊर्ध्वगमन होता है।

पाश्चात्य तत्त्वचिन्तकों और दार्शनिकों का कहना है कि मनुष्य को सद्‌विचार चाहिए। भारत के दार्शनिक इस से आगे चलकर कहते हैं कि सद्‌विचार के साथ सदाचार भी चाहिए। केवल भाषा से काम नहीं चलेगा। सदाचारी व्यक्ति के दर्शन, उपदेश और संग का प्रभाव पड़ता है। मदनमोहन मालवीय, तिलक, गांधीजी या ईश्वरचन्द्र विद्यासागर जैसे पुरुषों के संग से लाभ होता है। रामकृष्ण परमहंस, रमण महर्षि, लीलाशाहजी बापू जैसे ब्रह्मनिष्ठ सत्पुरुषों के संग में आने से मनुष्य का जीवन ईश्वराभिमुख बनता है।

योगविज्ञान की दृष्टि से हर मनुष्य में आध्यात्मिक शक्तियों के मुख्य सात चक्र याने केन्द्र होते हैं : मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञाचक्र और सहस्रार। हम लोग प्राय: नीचे के तीन चक्रों में अर्थात् मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपुर चक्र में ही जीते हैं। इन चक्रों में काम, क्रोध, ईर्ष्या, स्पर्धा आदि विकार रहते हैं। हमारी स्थिति इन केन्द्रों से बदलकर ऊपर के केन्द्रों में ले जाने की कला जो जानते हैं, अपनी दृष्टि में संप्रेक्षण-शक्ति बरसाने का जो सामर्थ्य रखते हैं ऐसे सत्पुरुषों का सान्निध्य-सेवन करने की अगर तड़प हममें जग जाये और उनका मार्गदर्शन मिल जाय तो उनके सान्निध्य मात्र से हमारे जीवन में काम की जगह राम का रस प्रकट हो जाय, क्रोध शान्ति में बदल जाय।

यह शान्ति भी लाचारीवाली शान्ति नहीं अपितु सामर्थ्ययुक्त शान्ति। शूरवीरता होते हुए भी संयम का आचरण हो ऐसी योग्यताएँ उन महापुरुषों के प्रसाद से हमारे जीवन में विकसित होती हैं।

भारतीय संस्कृति का अमृतपान जिन्होंने किया हो, भारतीय दर्शन और योग में जिन्होंने प्रवेश किया हो ऐसे सत्पुरुषों के संपर्क और मार्गदर्शन से आज भी युवक-युवतियाँ, आबालवृद्ध सब हरिरस का पान करके, सदाचारी जीवन जीकर इस लोक और परलोक में सुगमता से सुख, शान्ति और मुक्ति का अनुभव कर सकते हैं।

दु:खों से छूटने का दूसरा कोई उपाय नहीं है। भड़कीले आकर्षणों से अथवा पाश्चात्य 'वानरीकरण' से घड़ीभर के लिए सुख दिखेगा लेकिन उससे तन रोगी, मन मलिन और बुद्धि निस्तेज हो जाती है। पहले के जमाने में भारत के युवान, चाहे वे राजकुमार ही क्यों न हों, गुरुकुल में पढ़ते थे और ब्रह्मतेज से तेजस्वी होकर आते थे। अब तो भड़कीले और विकारी आकर्षणों से युवान इतना जल्दी फिसल जाता है कि उसका तेज और ओज नष्ट हो जाता है। तेज और ओज नष्ट हो जाय उससे पहले अगर वह आसन, प्राणायाम और ध्यान की उत्कण्ठा जगा ले तो भारत का युवान, भारत का नागरिक खुद भी तैर सकता है और दूसरों को भी तार सकता है।

**'अनलहक' का उद्घोष करने के कारण मन्सूर को शूली पर चढ़ाया जाता है जबकि हमारी संस्कृति में 'अहं ब्रह्मास्मि' का अनुभव करनेवाले महापुरुषों की पूजा होती है।**

स्वामी रामतीर्थ जब कालेज में पढ़ते थे तब परीक्षा के पेपर में कहा जाता : 'निम्न दस प्रश्नों में से किन्हीं छः प्रश्न के उत्तर दो।' स्वामी रामतीर्थ दसों प्रश्न के जवाब लिख देते और पूर्ण विश्वास और हिम्मत के साथ पेपर में परीक्षक के लिए सूचना लिख देते कि दसों उत्तरों में से किन्हीं छः उत्तर को जाँच लीजिए।

**सुकरात को जबरन विष दिया गया। शिवजी ने लोक-कल्याण हेतु स्वेच्छा से विष ग्रहण किया, कण्ठ में ही धारण किया और नीलकण्ठ होकर पूजे गये।**

ऐसी तेजस्वी बुद्धिमत्तावाले रामतीर्थ को कहा गया : "आप ऐसे प्रतिभावान विद्यार्थी हैं तो विदेश में जाएँ और बड़ी डिग्री ले आएँ।"

रामतीर्थ ने कहा : "बड़ी डिग्री ले आऊँ फिर क्या ?"

अध्यापकों ने कहा : "अच्छी नौकरी मिलेगी, अच्छा बंगला मिलेगा।"

रामतीर्थ ने कहा : "मुझमें ऐसी तेजस्वी अच्छी बुद्धि है तो वह ब्रिटिश शासन को बेचने के लिए नहीं है अपितु अच्छे में अच्छा जो आत्मा-परमात्मा है उसका साक्षात्कार करने के लिए है।"

रामतीर्थ को बचपन से ही सुसंस्कार मिले थे। आत्म-साक्षात्कार होने के बाद वे जब अमेरिका गये उस समय अमेरिका के राष्ट्रपति मि. रूझवेल्ट ने उनके चरणों में बैठकर शान्ति पायी। रूझवेल्ट को कहना पड़ा कि : "मुझे इसा मसीह के दर्शन भारत से आये हुए इन रामतीर्थ के रूप में हुए हैं।"

## युवानों के नैतिक उत्थान में व्यसन-मुक्ति एवं ब्रह्मचर्य का महत्त्व

युवानों के सर्वांगीण विकास के लिए ब्रह्मचर्य अत्यंत आवश्यक है।

गुजरात के भूतपूर्व राज्यपाल (गवर्नर) श्रीमन्नारायण आइन्स्टाइन को मिलने गये। उन्होंने आइन्स्टाइन से प्रश्न किया :

"रिसर्च के जगत में आप इतने सुप्रसिद्ध हुए इसका मुख्य कारण क्या है ?"

आइन्स्टाइन श्रीमन्नारायण का हाथ पकड़कर एक साधना-खण्ड में ले गये। वहाँ एक अच्छा सुहावना आसन और ध्यान करने के लिए एक फोटो था। आइन्स्टाइन ने कहा : "मैं हररोज यहाँ ध्यान करता हूँ। अंतिम चार वर्षों से मैं अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करता हूँ। शुद्ध आहार लेता हूँ। ध्यान करने से मेरी प्रज्ञा का विकास हुआ है।"

ब्रह्मचर्य तो हरेक क्षेत्र में काम आता है। व्यसन से तमोगुण बढ़ता है जबकि ब्रह्मचर्य और सदाचार से सत्त्वगुण बढ़ता है। **'सत्त्वात् संजायते ज्ञानम्।'** ज्यों ज्यों सत्त्व का प्रमाण बढ़ता है त्यों त्यों हमारा ज्ञान, तन्दुरुस्ती और प्रसन्नता बढ़ती है। ज्यों ज्यों तमोगुण बढ़ता है त्यों त्यों अशान्ति, खिन्नता, उद्वेग और पलायनवादी विचार बढ़ते हैं। इसीलिए पहले के जमाने में माता-पिता अपने बच्चों को बाल्यकाल में ही सारस्वत्य मंत्र दिलवाने का प्रयास करते थे।

बीरबल ग्यारह साल का था तब सारस्वत्य मंत्र जपता था। उसकी विलक्षण बुद्धिमत्ता देखकर अकबर ने उसे बुला लिया। ग्यारह-बारह साल की उम्र में ही उस बालक ने सारस्वत्य मंत्र के जप से अपना अंतःकरण इतना सुविकसित कर लिया था कि इतनी छोटी उम्र में ही उसे अकबर बादशाह ने अपने मंत्रीपद पर नियुक्त कर दिया।

व्यसन बच्चों को ग्रस ले उससे पहले ही बच्चों पर व्यसन की छाया तक न पड़े ऐसा प्रयत्न हमें बच्चों के लिए करना चाहिए।

**जिसस क्राइस्ट दुर्जनों के द्वारा मारे गये जबकि श्रीकृष्ण ने दुर्जनों को स्वधाम पहुँचा दिये।**

बालक के जन्म से लेकर सात वर्ष तक उसके स्थूल शरीर की नींव बनती है। उसके लिए माँ-बाप को ध्यान

रखना चाहिए। बच्चे के पेट में कुछ तकलीफ हो तो पपीता और पपीते के पाँच-सात बीज दो चार दिन खिलाना चाहिए।

दूसरे सात वर्ष में बच्चे का भावकेन्द्र विकसित होता है। बच्चे की भावनाओं को आघात न पहुँचे, उसके जीवन में अच्छे भाव पनपें, सुसंस्कार मजबूत बने इसका ध्यान रखना चाहिए।

तीसरे सात वर्ष के दौरान उसका तीसरा शरीर, मनःशरीर विकसित होता है।

पहले, दूसरे और तीसरे शरीर के विकास की ओर हम ध्यान दें तो बच्चे को व्यसन स्पर्श भी नहीं कर सकता।

किसीके जीवन में व्यसन घुस गया हो, व्यसन ने जीवन को ग्रस्त कर लिया हो तो उसे प्राणायाम और ध्यान का सहारा लेना चाहिए, किसी सत्पुरुष के शिविर में जाकर संप्रेक्षण शक्ति का लाभ प्राप्त करना चाहिए।

भीतर के केन्द्र रूपान्तरित हो जायँ तो आदमी कैसा भी पतित हो, वह महान बन सकता है। वालिया लूटेरा वाल्मीकि ऋषि बन गया। महामूर्ख में से महाकवि कालिदास प्रकट हो गये।

आज चारों ओर कायदे-कानून एवं उपदेशों का तो बहुत प्रवाह है लेकिन विकारों से कैसे बचें इसका मार्गदर्शन हमारे पास नहीं है। 'चोरी मत करो ... दुराचार मत करो ...' ऐसे उपदेश तो हैं लेकिन आदमी जब तक नीचे के केन्द्रों में रहेगा तब तक उसका स्वभाव ऐसा ही रहेगा।

**मानो न मानो यह हकीकत है।**
**खुशी इन्सान की जरूरत है॥**

आदमी नीचे के केन्द्रों से ऊपर उठे और उसे भीतर की खुशी मिले तो उसके व्यसन, विकार और दुश्चरित्र सब निवृत्त हो जाय, वह सदाचारी, निर्व्यसनी और महान आत्मा बन जाय।

**पाश्चात्य जगत के प्रसिद्ध डॉ. डायमन्ड कहते हैं : "डिस्को डान्स से जीवन-शक्ति का ह्रास होता है और भारतीय रीति से कीर्तन करने से जीवन-शक्ति का विकास होता है।"**

पहले गांधीजी का जीवन कामी था। फिर नीचे का केन्द्र उनका बदला, काम राम में परिवर्तित हुआ और गांधीजी महापुरुष होकर विख्यात बन गये। वालिया लूटेरे पर नारदजी ने कृपा करके संप्रेक्षण शक्ति का धक्का लगाया। वह वालिया लूटेरा वाल्मीकि ऋषि बन गया। अतः आज के युवक-युवतियों को निराश होने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है।

**जहाजों को जो डूबा दे उसे तूफान कहते हैं।**
**तूफानों से जो टक्कर ले उसे इन्सान कहते हैं॥**

हजारों विघ्न-बाधाएं आवें और हजार बार तुम फिसल जाओ फिर भी घबराना नहीं। कुछ युक्तियाँ जान लो तो जीवन के भीतरी 'गीयर' बदल जाएंगे। पतन की खाई के 'रिवर्स गीयर' में जानेवाली गाड़ी जीवन-उत्थान के मार्ग पर अवश्यमेव अग्रसर हो जाएगी।

शाबाश वीर ! शाबाश ... !! हिम्मत करो। खोज लो तुम्हारी जीवन-गाड़ी के 'गीयर' को बदलनेवाले ... सचोट अंतर्यात्रा करानेवाले किसी संतपुरुष की शरण।

'मरने के बाद सुख-शान्ति मिलेगी' ऐसा वायदा बेकार है। इसी जन्म में, इसी जीवन में, कुछ ही दिनों की साधना से स्वर्गीय सुख, शान्ति और आनन्द का अनुभव कर लो।

हे मुक्तात्मा ! ऊठो ... जागो ... । आनन्द, शान्ति और मुक्ति तुम्हारा जन्मसिद्ध अधिकार है। उसे प्राप्त करो। समय सरक न जाय इसलिए सावधान रहना मेरे भैया !!!

*

**साधना द्वारा जो साधक अपने वीर्य को ऊर्ध्वगामी बनाकर, ऊर्ध्वरेता होकर योग-मार्ग में आगे बढ़ते हैं वे कई प्रकार की सिद्धियों के मालिक बन जाते हैं। ऐसा ऊर्ध्वरेता पुरुष ही परमात्मा को पा सकता है, आत्म-साक्षात्कार कर सकता है।**

# पादरी स्टौक्स पर भगवत्कृपा

कई वर्ष पहले अमेरिका से एक सुशिक्षित एवं तेजस्वी युवक को ईसाई धर्म का प्रचार और प्रसार करने के उद्देश्य से भारत भेजा गया। इस प्रतिभाशाली एवं समर्पित भावनावाले युवक का नाम था सैम्युल एवन्स स्टौक्स।

भारत में उसे हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी इलाकों में ईसाई धर्म के प्रचार का कार्य सौंपा गया। यह क्षेत्र निर्धनता और पिछड़ेपन से ग्रसित था; अतः पादरी स्टौक्स ने गरीब पर्वतीय लोगों में कुछ ही समय में ईसाइयत के प्रचार में अच्छी सफलता प्राप्त कर ली।

स्टौक्स ने अपने प्रभाव और सेवा-भाव से हजारों पर्वतीयों को हिन्दू धर्म से च्युत कर ईसाई बना लिया। उनके घरों से रामायण, गीता और अवतारों की मूर्तियाँ हटाकर बाइबिल एवं ईसा की मूर्तियाँ स्थापित करा दी।

एक दिन पादरी स्टौक्स कोटागढ़ के अपने केन्द्र से सैर करने के लिए निकले। सड़क पर उन्होंने एक गेरूए वस्त्रधारी तेजस्वी संन्यासी को घूमते देखा। एक दूसरे से परिचय हुआ तो पता चला कि वे मद्रास के स्वामी सत्यानन्दजी हैं तथा हिमालय की यात्रा पर निकले हैं। पादरी स्टौक्स विनम्रता की मूर्ति तो थे ही। अतः उन्होंने स्वामीजी से रात्रि को अपने निवासस्थान पर विश्राम करने एवं धर्म के सम्बन्ध में विचार-विमर्श करने का अनुरोध किया।

स्वामीजी ने रात्रि को गीता का पाठ कर भगवान श्रीकृष्ण की उपासना की। स्टौक्स और उनका परिवार जिज्ञासा के साथ यह सब देखते रहे। रात्रिभर गीता, अध्यात्मवाद, हिन्दू धर्म के महत्त्व और अति भौतिकवाद से उत्पन्न अशान्ति पर चर्चा होती रही, स्टौक्स-परिवार गीता की व्याख्या सुनकर गीतातत्त्व से बड़ा प्रभावित हुआ। भारत के अध्यात्मवाद, भारतीय दर्शन और संस्कृति की महत्ता ने उनकी आँखें खोल दीं। भगवान श्रीकृष्ण तथा गीता ने उनके जीवन को ही बदल दिया।

प्रातःकाल ही युवा पादरी स्टौक्स ने स्वामीजी से प्रार्थना की : "आप मुझे अविलम्ब सपरिवार हिन्दू धर्म में दीक्षित करने की कृपा करें। मैं अपना शेष जीवन गीता और हिन्दू धर्म के प्रचार में लगा दूँगा तथा पर्वतीय गरीबों की सेवा कर अपना जीवन भारत में ही व्यतीत करूँगा।"

कालान्तर में उन्होंने कोटागढ़ में भव्य 'गीता-मन्दिर' का निर्माण करवाया। वहाँ भगवान श्रीकृष्ण की मूर्तियाँ स्थापित करवाईं। बर्मा से कलात्मक लकड़ी मँगवाकर उस पर पूरी गीता के श्लोक खुदवाये। सेवों का विशाल बगीचा लगवाया। सत्यानन्द स्टौक्स अब भारत को अपनी पुण्य-भूमि मानकर उसकी सुख-समृद्धि में तन्मय होकर लग गये। भारत के स्वाधीनता-आन्दोलन में भी उन्होंने सक्रिय रूप से भाग लिया तथा छः मास तक जेल-यातनाएँ भी सहन कीं। महामना मालवीयजी के प्रति उनकी अगाध निष्ठा थी।

उन्होंने 'देवोपासना', 'टु एवेकिंग इन्डिया' तथा 'गीतातत्त्व' आदि पुस्तकें लिखीं। उनकी 'पश्चिमी देशों का दिवाला' पुस्तक तो बहुत ही लोकप्रिय हुई, जिसकी भूमिका श्री दीनबंधु एंड्रूज ने लिखी थी।

महामना मालवीयजी ने एक बार उनसे पूछा : "आप हिन्दूओं का धर्म- परिवर्तन कर ईसाई बनाने के उद्देश्य से भारत आये थे, किंतु स्वयं किस कारण ईसाई धर्म त्यागकर हिन्दू धर्म में दीक्षित हो गये?"

इस पर उन्होंने उत्तर दिया : "भगवान की कृपा से मेरी यह भ्रान्ति दूर हो गयी कि अमेरिका या ब्रिटेन भारत को ईसा का संदेश देकर सुख-शान्ति की स्थापना और मानवता की सेवा कर सकते हैं। मानवता की वास्तविक सेवा तो गीता, हिन्दू धर्म और अध्यात्मवाद के मार्ग से ही सम्भव है। इसीलिये गीता-तत्त्व से प्रभावित होकर मैंने हिन्दू धर्म और भारत की शरण ली है।"

**स्टौक्स-परिवार गीता की व्याख्या सुनकर गीतातत्त्व से बड़ा प्रभावित हुआ। भारत के अध्यात्मवाद, भारतीय दर्शन और संस्कृति की महत्ता ने उनकी आँखें खोल दीं। भगवान श्रीकृष्ण तथा गीता ने उनके जीवन को ही बदल दिया।**

— श्री शिवकुमारजी गोयल
(पत्रकार)

*

# निर्मानता-निष्कामता

एक संत ने चैतन्य महाप्रभु को दो बार संदेश भेजा कि आप हमारे यहाँ पधारें और हमारी कुछ शंकाओं का निराकरण लाने की कृपा करें।

गौरांग उन संत महात्मा के यहाँ गये तो उस समय संत के यहाँ सत्संग का वातावरण पूरी रंगत में था। चैतन्य महाप्रभु ... निमाई पंडित ... शास्त्रार्थ में काशी के तमाम विद्वानों को परास्त कर चुके थे। वे तेजस्वी, बुद्धिमान एवं रूपवान भी थे। उन्होंने देखा कि सत्संग-भवन खचाखच भरा हुआ था। बैठने की कहीं कोई गुंजाइश नहीं, फिर तो जहाँ जूते पड़े थे, गोरांग उन्हीं जूतों में जा बैठे। कथा करने वाले संत की दृष्टि एकाएक उन पर जा टिकी, उन्हें प्रतीति हो गई कि अरे ! ये तो महाप्रभु गौरांग जान पड़ते हैं। तत्काल आदमी भेज उन्हें आदर-सम्मान के साथ उच्चासन पर बिठाने का आदेश दिया।

चैतन्य ने उस आदमी को समीप आया देख, स्थिति को समझ-बूझकर उसे भी वहीं अपने निकट बिठा लिया और उसे समझा दिया : 'अभी सत्संग चल रहा है न ! ऐसे में वक्ता और श्रोता की तारतम्यता कहीं टूट न जाय। अतः तू भी अभी बैठे रह, फिर चलेंगे।'

सत्संग जब समाप्त हुआ तब कहीं गौरांग आगे आये और संतों से उनका हिलन-मिलन एवं शिष्टाचार हुआ। गोरांग समझदार थे। उन्होंने संत-मिलन के साथ ही सर्व प्रथम संतजनों को अपनी ओर से प्रणाम निवेदित किया।

आप किसीको झुकें तो उससे वह बड़ा हुआ कि नहीं वह जाने, मगर आप में विनम्रता का सद्गुण तो जग ही जाता है। वह व्यक्ति यदि बुद्धिमान होगा तो वह आपका प्रणाम परमात्मा को पहुँचा देगा, यदि मूर्ख होगा तो अकड़ू या अभिमानी बन जायेगा, उसकी मरजी है।

प्रणाम लेनेवाले को खतरा हो सकता है। प्रणाम करनेवाले का भला इसमें क्या बनता-बिगड़ता है ?

विनय से अहंकार का विलय होता है। विनय से शत्रुता का निवारण हो सकता है।

विनय अपने से श्रेष्ठ व्यक्तियों एवं आत्मीय जनों से सद्भाव और सहानुभूति दिलाता है, आशिष का पात्र बनाता है। विनय से आदमी की आंतरिक योग्यता में वृद्धि होती है और बुद्धि का विकास होता है। विचार से विनय स्फुरित होता है और अविचार से अहंकार का उदय होता है।

चैतन्य महाप्रभु ने कहा कि : "महाराज ! सब लोग सत्संग में दत्तचित्त थे। उनके सत्संग में विघ्न या विक्षेप पड़े यह उचित नहीं। रसपूर्वक सत्संग में निमग्न भक्तजनों के ध्यान में विक्षेप डालते हुए कोई आगे बढ़ता जाये यह उचित नहीं। इसलिए आपकी दिव्य वाणी सुनने के उद्देश्य से मैंने वहीं स्थान ले लिया।"

वे संत विद्वान और प्रतिभावान तो थे क़िन्तु आंतरिक विश्रांति-बोध में अभी शिशुवत ही थे।

उन्होंने पूछा : " जो घास-फूस खाते हैं उन ऋषियों को भी काम सताता है और आप ठाकुरजी के आगे बाल-भोग लगाते हो, खीर-मालपूए आदि खाते हो, फिर भी काम रहित हो, यह कैसे संभव है ?"

गौरांग ने उन्हें प्रतिबोधित करते हुए कहा कि :

" देखो महाराज ! बकरा नित्यप्रति घास-फूस खाता है, कोई उन्मादक व्यसन नहीं करता फिर भी वह अत्यंत कामी होता है। कबूतर रूखा-सूखा अन्न-कण ही खाकर जीवन व्यतीत कर लेता है, फिर भी अत्यंत कामी होता है, जबकि सिंह मांस खाता है फिर भी जीवन में केवल एक बार ही संसार-भोग करता है, क्योंकि सिंह को ज्ञान है कि अन्ततः वह सिंह है और सिंह कभी निर्वीर्य नहीं हो सकता।

ठीक इसी भाँति यदि आपको पता चल जाय कि मैं परमात्मा का हूँ, परमात्मा का अंश हूँ और परमात्मा मेरे हैं तो आप के जीवन में से दोष, विकार की पकड़ शिथिल हो जाय। अगर आपको अधिक चिंतन रहता है कि मैं यह नहीं खाता, वह नहीं पीता तो फिर दोष निकालने के बजाय आप में दोष घूसते जाएँगे। निर्विकारी परमात्मा के स्वरूप में विश्रांति नहीं होगी। निष्कामता, असंगता या अनन्यता का प्रसाद जीवन में नहीं छलकेगा।"

*

अभिमान नासमझी से उत्पन्न होता है और विनय समझदारी से आता है। विद्वान थोड़ा भी विचार करे तो उसके समीप अभिमान घड़ीभर भी टिक नहीं सकता। बड़े से बड़ा राजनेता या धर्माचार्य यदि थोड़ा मन में विचार करे तो उसका सत्ताभिमान या धर्मोन्माद उसके समीप न टिके। बड़े से बड़ा रूपवान जरा भी विचारे तो रूप का दर्प सुदूर सरक जाय।

अविचार से अभिमान टिकता है और विचार से विनय आता है। **'विद्या ददाति विनयम्।'** विनय से नम्रता आती है। शत्रु आपके घर आया है और आप आदर सम्मान देकर उसका विनय से वंदन करते हैं तो उसके सत्कार से आप शत्रु के मन पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। शत्रु को समीप आते देख यदि आपने तत्क्षण उठकर आदर दिया, नमन किया और विनय से जलपान कराया, उसे बड़प्पन दिया तो शत्रु इससे बड़ा नहीं हो गया। आपने शत्रु को बड़प्पन दिया अर्थात् आप उसे बडप्पन देनेवाले हुए। जो किसीको बड़ा बनाता है, वह वास्तव में बड़े का भी बड़ा होता है। विनयभाव कभी दीनता में विश्वास नहीं रखता। विवेकपूर्ण विनय अपने चित्त से अहंकार का उन्मूलन करके आत्मप्रसाद का बीजारोपण करता है। जिसका अहं मिट जाता है उस आदमी का चित्त परमात्मा में स्थिर हो जाता है। यदि बच्चे का अहं विकसित नहीं है तो बच्चे की अठखेलियाँ और तुतली बोलियाँ भी माँ-बाप की थकान मिटा देती हैं। बच्चा बड़ा प्यारा लगता है। वही बच्चा थोड़ा बड़ा हो जाता है तो उसका अहं विकसित हो जाता है। परिणाम यह होता है कि उसका प्यारा प्यारा स्वभाव और स्वर का माधुर्य लुप्त होता चला जाता है।

जिसके चित्त में अहंकार नहीं उसका अपमान या अनादर होते हुए भी उसके चित्त में कभी क्षोभ नहीं होता और मान होने से अहंकार उभरता नहीं। मान तो देनेवाले के आधीन होता है। देनेवाले ने मान दिया है वह उसकी सज्जनता से है। वह मान लेकर अगर हम अभिमान करते हैं तो वह मान जिसकी सत्ता से उसने दिया उस परमात्मा को भूल गये और उसका अनादर कर बैठे। अभिमान नासमझी से आता है। यह नासमझी मिटाने के लिए नित्य प्रातःकाल उठकर प्रार्थना करते रहना चाहिए कि :

"हे भगवान! तू मान देनेवाले को प्रेरणा दे-देकर मुझे मान दिलवाता है। मेरा अहंकार मिटाने के लिए मेरा अपमान भी करवा देता है। तेरी बड़ी कृपा है। हजारों जन्मों से मैं चित्त की इस झंझटबाजी के कारण ही अनेकानेक माताओं के गर्भों में पलता रहा। अनेक पिताओं के वासना - विलास का निमित्त बनता रहा। हे परमात्मा! अब मुझे तू सद्बुद्धि दे दे।"

प्रातः बेला में की गई प्रार्थना बड़ी सामर्थ्यशालिनी होती है। प्रातः में लिया गया संकल्प जल्दी ही फलवान हो जाता है। प्रातः की स्मरित शुभभावना शीघ्र पल्लवित और पुष्पित हो उठती है।

प्रातःकाल में अपने स्वास्थ्य के विषय में, सत्कर्म के विषय में या जीवन-विकास संबंधी विचारों को दो-चार क्षण दोहराते रहें तो आपके विकास के विचार परिपुष्ट होते जाएँगे। आपको स्वास्थ्यलाभ भी होगा और लौकिक व्यवहार में भी आपको शीघ्र सफलता सुलभ होगी।

**"प्रातःकाल उठहिं रघुनाथा, मात-पिता गुरु नावइ माथा।"**

माता-पिता और गुरुजनों को प्रणाम करते रहने से भी विनय आता है।

यदि किसी व्यक्ति को आपने पानी का एक गिलास पिला दिया, तो उस पानी से उसकी प्यास बुझी, परंतु तुम्हें सेवा और विनय का एक मौका मिला, तुम्हारे संस्कार बढ़े, शुद्ध अंतःकरण का निर्माण हुआ।

मजे की बात तो यह है कि लोग अपना बाथरूम गंदा रखना पसंद नहीं करते, अपना रसोईघर गंदा रखना नहीं चाहते, अपना प्रांगण गंदा रखना नहीं चाहते। ये सब यहाँ ही रह जानेवाले उपकरण हैं। लेकिन जो अंतःकरण हमारे नित्य का संगी-साथी है, उस अंतःकरण

की गंदगी मिटाने का किसीको कभी खयाल तक नहीं आता। मृत्यु के पश्चात् भी जो अंतःकरण साथ में रहनेवाला है, वह अंतःकरण अभिमान, काम, क्रोध एवं लोभादिक गंदगियों से परिपूर्ण है। यदि हम इसकी स्वच्छता का ख्याल नहीं रखते तो हमारा बाथरूम चाहे कितना भी चमचमाता हो, रसोईघर चाहे जितना साफ-सुथरा हो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता।

**लोग अपना बाथरूम गंदा रखना पसंद नहीं करते, अपना रसोईघर गंदा रखना नहीं चाहते, अपना प्रांगण गंदा रखना नहीं चाहते। ये सब यहाँ ही रह जानेवाले उपकरण हैं। लेकिन जो अंतःकरण हमारे नित्य का संगी-साथी है, उस अंतःकरण की गंदगी मिटाने का किसीको कभी खयाल तक नहीं आता।**

अपने चित्त को आत्मप्रसाद से यदि भरना चाहते हो तो सत्संग का सहारा अवश्य लो। प्रातः बेला में परमात्मा का संग करने के लिए परमात्मा से ही अनुनय करो कि :

"हे भगवान! हमें शुभ सम्पर्क देना, जीवन में विनय प्रदान करना। आज के दिन मेरे इस नश्वर शरीर का कुछ न कुछ सदुपयोग हो जाय। इस मन का, बुद्धि का, धन-दौलत का तेरी सृष्टि की साज-सज्जा में, सेवा में कहीं कुछ सदुपयोग हो जाय ऐसा तू मुझ पर अनुग्रह करना।"

सवेरे उठते ही आप कुछ ऐसी ही प्रार्थना करते रहेंगे तो संतों और संन्यासियों को, तपस्वियों को घने जंगलों में तप करने से जो पुण्यफल प्राप्त होता है, सती-साध्वियों को सतीत्व के पुरस्कार स्वरूप जो सुफल सुलभ होता है वही सुफल आपको भी परमात्मा देगा। इसलिए तो तुलसीदासजी ने कहा है :

**'खीझे दीन परमपद, रीझे दीन लंक।'**

विभीषण पर जब श्रीराम रीझ गये तो उसे लंकाधीश बना दिया और रावण पर खीझ गये तो उसे परमपद प्रदान कर दिया।

उषःकाल की एक छोटी-सी साधना भी आपमें सद्गुणों का प्रसार करेगी, आप में सत्संग की दिव्यता जगायेगी। आप सुबह में जब भी उठें या नींद से मुक्त हों तो अपने शरीर को सर्वप्रथम बिस्तर पर ही खींचें, ऐंठें और शांत होकर उठ बैठें। शरीर को थोड़ा खींचने और ऐंठने से जहाँ सुस्ती और थकावट होती है वहाँ शारीरिक शक्तियों को वेग मिलता है और शांति से बैठने में जहाँ भी कहीं शक्ति की क्षीणता होगी वहाँ शक्ति अनुपूरित हो जाएगी। शरीर के खिंचाव से आत्मिक शक्तियों में कंपन होगा, उससे शक्ति का एक फोर्स उठेगा और वह शक्ति मन, बुद्धि और अन्यत्र जहाँ भी आवश्यकता होगी वहाँ वितरित होती चली जाएगी। शेष दो-चार मिनट आप चुपचाप मौन ग्रहण कर बैठे रहें और भीतर ही भीतर परमात्मा को प्यार से स्मरण करते रहें, दुलारते रहें।

यदि परमात्मा की प्रेरणा न हो तो हमारी आपकी सामर्थ्य नहीं कि गहरी नींद से जग जाएँ। जो परमात्मा आपको गहरी निद्रा से जगाता है, उस परमात्मा से कहो कि :

"हे प्रभु! जैसे इस शरीर को गहरी नींद से तूने जगाया है ठीक उसी प्रकार अब अविद्या की गहरी नींद से मुझे जगा दे मेरे मालिक! जन्म-मरण के आवागमन से भी धीरे-धीरे मुक्त कर दे। अभी तो तूने तमस से छुटकारा दिलाया है, मगर अब आगे गर्भ-बंधन से विमुक्त भी बना देना। आज का मेरा दिन सत्कार्यों में ही व्यतीत हो ऐसी अनुकम्पा करना प्रभो!"

छोटा-छोटी बूँदें मिलकर सागर को भर देती हैं। जब कभी बारिश होती है तो एकाएक सागर नहीं बरस पड़ता, बरसता तो सागर ही है पर वह बूँद के ही लघु-लघुत्तर स्वरूप में क्रमशः बरस-बरसकर, बूँद से बूँदों को मिलाकर कहीं तालाब बन जाता है, कहीं बाढ़ से उफनती हुई नदियों का स्वरूप ग्रहण कर लेता है। यदि वही बूँद सूखती जाए तो तालाब, ताल-तलैया और नदी, सरोवर खाली भी हो जाते हैं।

जीवन में हमारी छोटी-छोटी गलतियाँ या दोषपूर्ण आदतें हमें राक्षस बनाते चलते हैं। इसका लूटा, उसका लूटा और एक-दूसरे का लूट-खसोटकर राक्षस बन गया, क्रूर और आततायी बन गया। किसी ने सच कहा है :

**'भूलें मिलकर छोटी - छोटी हमको बुरा बनाती हैं।'**

(अनुसंधान पेज ३२ पर...)

# साधक की सावधानी

तीर्थराम कॉलेज में प्रोफेसर थे । वे घर लौट रहे थे । रास्ते में सुंदर कागजी नींबू देखे । मन में हुआ कि नींबू बहुत बढ़िया हैं । एकाध नींबू चूसना तो स्वास्थ्य के लिए हितकर भी है ।

नींबू औषध की नाँईं लेना ठीक है मगर नींबू देखकर मुँह में पानी आ गया ।

तीर्थराम ने मन को समझाया : 'अरे नादान मन ! तेरे साथ वह प्रियतम है, उसको याद कर दिल में अहोभाव नहीं आता है और यह खटाई देखकर तेरे मुँह में पानी उमड़ता है ? धिक्कार है !'

अपने गाल पर एक चाँटा जमा दिया । पाँच-पचीस कदम आगे गये । मन ने फिर कहा : 'ना, ना... मैं तो औषध की नांई चाहता हूँ । मैं मजा लेने के लिए नहीं, नाड़ीशुद्धि के लिए चाहता हूँ ।'

'अच्छा चलो ।'

दो बढ़िया कागजी नींबू घर ले आये । उन्हें काटकर नमक, मिर्च भरकर जरा-सा सेंक लिया । चार टुकड़े कर दिये ।

अपने कमरे में बंद होकर बैठे । ॐ... ॐ... ॐ... का उच्चारण किया । स्वगत ही बोले :

"मन की क्या ताकत है कि मुझे रसना के सुख में गिराये ? मन की क्या ताकत है मुझे शिश्ना के सुख में गिराये ? मन की क्या ताकत है कि मुझे हाड-मांस के दर्शन के सुख में गिराये !"

फिर मन को लक्ष्य करके बोले : "अच्छा ! खा ले ये पड़े हैं ।"

बाँयें बाँध लीं । अदब मार दी । हाथों को अपने नियंत्रण में कर दिया ।

मन को कहा : 'ले ये औषधवत् पड़े हैं, ले चूस । खा, खा ले, उठा ले । मगर मेरी सत्ता के बिना हाथ हिले तो इन हाथों को काटकर फेंक दूँगा । ॐ... ॐ... ॐ...'

हकीकत में तुम इन्द्रियों के स्वामी हो, मन के स्वामी हो मगर मन-इन्द्रियों के विकारों को जब तुम पोसते हो तो तुम गुलामों के भी गुलाम बन जाते हो । ॐ कार का, प्रणव का जाप करो । अपनी हिंमत जगाओ । फिर तुम्हें देव के पास जाना नहीं पड़ेगा, देवों को रिझाने के लिए गिड़गिड़ाना नहीं पड़ेगा । देवता, यक्ष, किन्नर, गंधर्व तुम्हारी सेवा और दर्शन करके अपना भाग्य बना लेंगे ।

तीर्थराम ने मन से कहा : 'ले खा ।' मन कहता है कि अब लाये हैं, खर्चा बेकार जायेगा । टके के दो लिये हैं ।

'अच्छा तो खा ले । टके के हों चाहे दस टके के । ले खा... खा... दुष्ट मन ! खा, ले लुली जीभ ! तू भी खा । नींबू देखकर मुँह में पानी आ गया ? ले खा... खा ।' मन को कहते हैं : 'ले चूस ले... ' और हाथों को बोलते हैं : 'खबरदार ! अगर खुले तो खतरा है ।'

मन ने कुछ और उपाय सोचे । जीभ ने कुछ और बहाने बनाए । मगर रामतीर्थ का आत्मबल जगा हुआ था । बुद्धि मन के बहकावे में न आयी । नींबू उठाकर खिड़की से बाहर फेंक दिये ।

ये ही प्रोफेसर तीर्थराम बाद में महान संत स्वामी रामतीर्थ बने ।

स्वामी रामतीर्थ जब साधना करते थे तब उनको शरीर-सुख भोगने की भावना जग आई ।

जीव का पुराना स्वभाव है, गलती करने की उसकी पुरानी आदत है । अगर सावधान न रहे तो वह पुरानी छुपी हुई आदत फिर प्रकट हो जाती है और आदमी गिरता जाता है ।

समर्थ स्वामी रामदासजी ने कहा है कि : "भैंस के सिंग पर राई का दाना जितनी देर टिके उतनी देर भी मन ईश्वर से हटकर विकारों में टिका तो विनाश कर देगा, बरबाद कर देगा । इसीलिए सावधान रहो । विकारों के विचारों को पोसो मत । ये तुम्हारे बड़े शत्रु हैं । दुनिया के सब शत्रु मिलकर भी

**हकीकत में तुम इन्द्रियों के स्वामी हो, मन के स्वामी हो मगर मन-इन्द्रियों के विकारों को जब तुम पोसते हो तो तुम गुलामों के भी गुलाम बन जाते हो ।**

तुम्हारी इतनी बरबादी नहीं कर सकते हैं जितनी बरबादी तुम्हारे चित्त में उठे हुए विकारों को पोसने से होती है। फिर तुम चाहे बड़े प्रसिद्ध हो, अप्रसिद्ध हो, बलवान, धनवान, सत्तावान हो चाहे निर्बल और सत्ताहीन हो, ये विकार तुम्हें पीस-पीसकर मारते रहेंगे।"

रामतीर्थ के चित्त में विकार पैदा हुआ। उस सच्चे साधक तीर्थराम ने अपने आपको बबूल के शूलों की बाड़ में फेंक दिया। 'ले, कर आलिंगन, कर स्पर्श। वह भी पाँच भूत है, यह भी पाँच भूत हैं। ले मजा।'

**समर्थ स्वामी रामदासजी ने कहा है कि : ''भैंस के सिंग पर राई का दाना जितनी देर टिके उतनी देर भी मन ईश्वर से हटकर विकारों में टिका तो विनाश कर देगा, बरबाद कर देगा। इसीलिए सावधान रहो। विकारों के विचारों को पोसो मत। ये तुम्हारे बड़े शत्रु हैं।**

अपने को विकार में गिराने के बजाय काँटों में गिराना बहुत अच्छा है। मन को पता चला कि किसी मर्द के हाथ आया हूँ। पड़े रहे उसी में, थोडे शूल शरीर में लग गये।

शरीर में काँटे घूसे उसकी पीड़ा दिखती है मगर विकारों के द्वारा जब आदमी की शक्ति नष्ट होती है वह पीड़ा बाहर से इतनी दिखती नहीं इसलिए आदमी बार-बार महापीड़ा सहता रहता है। थोड़ी देर के लिए ग्लानि आ जाती है मगर फिर-फिर से मन धोखा देता है और हम लोग उस धोखे की बात को पोषण देते हैं।

दुनियाभर का लेक्चर सुने, दुनियाभर के लोगों को गुरु बनाये और दुनियाभर के मंत्र जपता रहे मगर इन्द्रियों को जब तक संयम के रास्ते पर नहीं लगाता तब तक आदमी फिर-फिर से बरबाद होता चला जाता है।

वासना को पोसना, वासना को पूर्ण करना ... इसमें मनुष्य की स्वतंत्रता नहीं है। वासना को निवृत्त करने में सब स्वतंत्र हैं। जो आदमी जितने अंश में निर्वासनिक-चित्त बनता है उतना ही वह महान होता है। जो पूर्ण निर्वासनिक बनता है वह तो पूर्ण परमात्मा का ही स्वरूप हो जाता है।

*

**बड़े खेद की बात है कि जो मनुष्यजन्म अपने और दूसरों के परम श्रेय परमात्मप्राप्ति में लगाना था उसके बजाय वे अपना अमूल्य जीवन हाड-माँस को चाटने-चूँथने में बरबाद कर रहे हैं। उनकी स्थिति दयाजनक है।**

**शरीर चाहे स्त्री का हो चाहे पुरुष का। प्रकृति के साम्राज्य में जो जीते हैं, अपने मन के गुलाम होकर जो जीते हैं वे सब स्त्री हैं और प्रकृति के बन्धन से पार अपने आत्म-स्वरूप की पहचान जिन्होंने कर ली, अपने मन की गुलामी की बेड़ियाँ तोड़कर जिन्होंने फेंक दी हैं वे पुरुष हैं। स्त्री या पुरुष शरीर एवं मान्यताएँ होती हैं, तुम तो तन-मन से पार निर्मल आत्मा हो।**

**लोहे से लोहा कटता है, काँटें से काँटा निकलता है उसी प्रकार शुभ कर्मों से कर्मों का उच्छेद होता है। कर्म से आत्मज्ञान नहीं होता लेकिन सदियों से इकट्ठे हुए कर्म मल को हटाने के लिए शुभ कर्म, निष्काम कर्म अत्यंत आवश्यक है। तभी आत्मज्ञान के लिए भूमिका बनती है।**

# दृढ़ संकल्प सफलता का प्रथम सोपान

प्रतिष्ठानपुर में राजा शालीवाहन राज्य करते थे। शालीवाहन राजा बड़े वीर्यवान, बलवान और बुद्धिमान थे। उन्हें ५०० रानियाँ थीं। एक दिन रानियों के साथ जलक्रीड़ा करने गये। जलाशय में जलक्रीड़ा करते करते वे चंद्रलेखा नामकी विदूषी रानी को जल से छींटे मारने लगे। उस रानी की प्रकृति शीत थी। उसको ये सब अच्छा नहीं लग रहा था। विदूषी रानी ने संस्कृत भाषा में कहा :

**"मा मोदकैः पूरय।"** ('मा मा उदकैः पूरय' अर्थात् मुझे पानी मत छींटो।)

शालीवाहन संस्कृत भाषा नहीं जानते थे। वे समझे कि यह विदूषी रानी कहती है कि मुझे मोदक दीजिए, पानी नहीं चाहिए। रानी ने तो कहा मुझ पर पानी नहीं छिड़किए। लेकिन शालीवाहन समझे 'मा मोदकैः पूरय' माने मेरी लड्डू की इच्छा पूर्ण कीजिए। स्नान का कार्यक्रम पूरा हुआ। राजा ने मंत्री को कहकर लड्डूओं का थाल मंगवाकर रानी के आगे धर दिया।

"ले, ये मोदक।"

विदूषी रानी ने देखा कि राजा संस्कृत के ज्ञान से बिल्कुल अनभिज्ञ हैं। उसको हँसी आ गयी। हँसी आ गई तो प्रतिष्ठानपुर के नरेश शालीवाहन उसकी हँसी से चिढ़े नहीं। उसकी हँसी से उद्विग्न नहीं हुए और उसकी हँसी से लंपटु नहीं हुए। उसके चमड़े चाटने में लुब्ध नहीं हुए। हँसी का कारण पूछा। ज्ञान का आदर किया, जिज्ञासा बढ़ाई।

"क्यों हँसी ? सच बता।" उसने कहा : "मैंने तो आपसे कहा 'मा मोदकैः पूरय... मा मा उदकैः पूरय। मुझे उदक माने पानी नहीं लगाओ। आप समझे मोदक माना लड्डू और लड्डू का थाल धर रहे हो इसलिए हँसी आ रही है।"

शालीवाहन को लगा कि मुझे संस्कृत का ज्ञान पाना चाहिए। बैठ गये तीन दिन तक एक कमरे में। सच्चे हृदय से, तत्परता से सरस्वती का आवाहन किया।

**जिनके पास प्राणबल होता है वे जिधर लगते हैं उधर पार होते हैं। आधा इधर आधा उधर... ऐसे आदमी भटक जाते हैं।**

जिनके पास प्राणबल होता है वे जिधर लगते हैं उधर पार होते हैं। आधा इधर आधा उधर... ऐसे आदमी भटक जाते हैं।

शालीवाहन की तत्परता से तीन दिन के अंदर ही सरस्वती देवी प्रकट हुई और कहा :

"वरं ब्रूयात्। वर माँगो।"

राजा : "माँ ! अगर तुम संतुष्ट हो तो मुझ पर कृपा करो कि मैं संस्कृत का विद्वान हो जाऊँ। संस्कृत का ज्ञान मुझे जल्दी से प्राप्त हो जाए।"

मा : "एवं अस्तु।"

मनुष्य जिस वस्तु को चाहता है उसी वस्तु को जरूर पाता है, अगर वह संकल्प में विकल्प का कचरा नहीं डाले तो ... अपने को अयोग्य मानने की बेवकूफी न करे तो। अरे ! यह तो ठीक है, सरस्वती माता से राजा ने संस्कृत का ज्ञान पाने का आशीर्वाद लिया लेकिन वह चाहता कि मुझे ब्रह्मज्ञानी गुरु मिल जायें और इन विकारी सुखों से बचकर मैं निर्विकारी नारायण का साक्षात्कार कर लूँ तो वैसा भी वरदान माँ दे देती।

उस बुद्धिमान लेकिन राजसी बुद्धिमान नरेश शालीवाहन ने माँ से संस्कृत का ज्ञान माँगा। माँ ने वरदान दिया। वह इतना बढ़िया विद्वान हुआ कि सारस्वत्य व्याकरण की उसने रचना की। दूसरे ग्रंथ भी रचे। उस राजा के नाम से संवतसर चला है, शालीवाहन संवत ! जैसे विक्रम संवत चलता है ऐसे ही शालीवाहन संवत चलता है।

कहने का तात्पर्य है कि हे मनुष्य ! तू अपने को तुच्छ, दीन-हीन मत मान। चाहे तेरे पास मकान, वैभव कम हो चाहे ज्यादा हो, चाहे तेरे रिश्ते-नाते बड़े लोगों से हो, चाहे छोटे लोगों से हो। लेकिन बड़े में बड़े जो परमात्मा हैं उनके साथ तो तेरा सीधा रिश्ता-नाता है।

हे आत्मा ! तू परमात्मा का अभिन्न अंग है। उसके विषय में जानकारी पा ले। सत्पुरुषों की शरण खोज कर सत्य स्वरूप परमेश्वर का साक्षात्कार कर ले। ध्यान और जप की विधियाँ जान ले आत्मारामी संतों से।

*

# विकार ही महा शत्रु हैं

विकारी जीवन मनुष्य का सर्वनाश कर देता है। पाश्चात्य जगत की ऐसी अंधी हवा चली है कि उससे प्रभावित लोग समझते हैं कि शरीर में जो वीर्य एकत्रित होता है वह एक मैल है। दस-पन्द्रह दिन में निकल जाय तो कोई हरकत नहीं।

अरे अभागे ! नासमझ ! वह मैल नहीं है। वह तो ओज है। उसको जितना संयम से संभालोगे उतना ही तुम्हारा आकर्षण, तुम्हारी शक्ति, तुम्हारी मेधा, एकाग्रता, प्रसन्नता प्रकट होगी। वह शरीर का 'क्रीम' है, सत्त्व है और उस सत्त्व को विकार भोगने में या दुष्ट कल्पना करके बहा देने में, नष्ट करने में अपना ही सर्वनाश है। जैसे माली बगीचा बनाये, पुष्पवाटिका तैयार करे, सुहावने, सुंदर, चित्ताकर्षक, सुगंधित पुष्प एकत्रित करके उनमें से इत्र निकाले और फिर वह इत्र गटर में, नाली में डाल दे तो वह कितना बेवकूफ है ?

ऐसे ही हम सेरभर (५०० ग्राम) बढ़िया पौष्टिक भोजन प्रतिदिन करें और इस प्रकार हम चालीस दिन जियें तब करीब पंद्रह ग्राम वीर्य बनता है और वह वीर्य एक बार विकारी सुख लेने में, काम-विकार की पूर्ति में नष्ट हो जाता है और हम फिर वहीं के वहीं गिरे-मरे रह जाते हैं। अपने शरीर की इस कमाई को व्यर्थ गँवाने की बेवकूफी से बचो और उन्नत, दीर्घ, ओजस्वी जीवन की कुंजियाँ अपने हाथ में रखो।

आँख, कान, नाक, जिह्वा और शिश्ना इन पाँच इन्द्रियों की लगाम मन के हाथ है और उनका उपयोग करने की सत्ता बुद्धि रखती है। बुद्धि निर्णय देती है : खा या न खा। कर या न कर। बुद्धि को सत्ता तुम देते हो। तुम जब बेहोश होते हो तब मन बुद्धि को फुसला लेता है, बुद्धि कमजोर रहती है तो तुम गिरते जाते हो। गिरने की ऐसी पक्की आदत पड़ती है कि फिर लगता है : इन चीजों के बिना जियेंगे कैसे ?

एक बार अपनी महिमा को, अपने सोहं स्वभाव को, अपने आत्मबल को जगाकर बुद्धि का तेज बढ़ा दो। फिर बुद्धि उचित निर्णय करेगी। सत्संग, साधुदर्शन, देवदर्शन इसीलिए है, जप-तप इसीलिए है कि तुम्हारी बुद्धि धोखा न खा जाय, मन के आधीन न वर्ते अपितु मन बुद्धि के आधीन रहे। मन जब बुद्धि के आधीन चलेगा तब इन्द्रियों पर संयम रहेगा। मन जब इन्द्रियों के पक्ष में होता है और बुद्धि को अपने पक्ष में बना लेता है तब ... दिन को जो साहब ओर्डर फरमाते हैं और हजारों लोग भागदौड़ मचा देते हैं, रात को वे ही साहब लेडी के आगे जैसे कुत्ता कुत्ती की योनि चाटता रहता है, वैसी ही दशा में गिर जाते हैं। धिक्कार है उस पढ़ाई, लिखाई और साहबी को जो तुम्हारी बुद्धि को बार-बार उस गंदे मैले केन्द्रों को चूंथने में लगा देती है। धिक्कार है उस साहेबपने को, बुद्धिमत्ता को ! 'यह तो शरीर का मैल है... निकलना चाहिए... ।' धिक्कार है ऐसी बुद्धि को ! ऐसी डॉक्टरी को आग लगा दो, ऐसी समझ को आग लगा दो जो तुम्हें निस्तेज बना देती है।

मन की धोखेबाजी से बचने के लिए प्रणव का जप, प्राणायाम और कोई न कोई नियम ले लो। अगर मन ने गलती की तो दो दिन भोजन नहीं मिलेगा ऐसा सबक दिया करो।

जीवन में महापुरुषों का पीठबल चाहिए। मगर तुम अपने आप महापुरुषों के पीठबल का उपयोग करोगे तब न ! महापुरुषों का भी महापुरुष तो परमात्मा है और वह तो तुम्हारा अंतर्यामी बनकर बैठा है। तुम और कौन-से महापुरुषों का पीठबल चाहते हो ? अरे ! उन महापुरुषों का पीठबल है सत्संग। वे तुम्हें उपदेश करते हैं। अब तुम दृढ़ होने के लिए, कुछ समय उनकी प्रेरणा से एकांतवास में या उनके सान्निध्य में अपने को कुछ समय के लिए स्थित कर दो।

*

**हम सेरभर ( ५०० ग्राम ) बढ़िया पौष्टिक भोजन प्रतिदिन करें और इस प्रकार हम चालीस दिन जियें तब करीब पंद्रह ग्राम वीर्य बनता है और वह वीर्य एक बार विकारी सुख लेने में, काम-विकार की पूर्ति में नष्ट हो जाता है और हम फिर वहीं के वहीं गिरे-मरे रह जाते हैं । अपने शरीर की इस कमाई को व्यर्थ गँवाने की बेवकूफी से बचो और उन्नत, दीर्घ, ओजस्वी जीवन की कुंजियाँ अपने हाथ में रखो ।**

## 'राही रुक नहीं सकते...'

( गतांक से चालू... )

सुबह हुई। उधर घर में पता चला कि कर्मावंती गायब है। अरे! आज तो बारात आनेवाली है और कर्मावती कहाँ? माता-पिता हक्के-बक्के-से हो गये। घर में वातावरण चिन्तित बन गया। इधर-उधर छान-बीन की, पूछ-ताछ की, कोई पता नहीं चला। सब दुःखी हो गये।

परशुराम भक्त तो थे, माँ भी भक्त थी। फिर भी उन लोगों को समाज में रहना था। उन्हें खानदानी इज्जत-आबरू की चिन्ता थी। बारातवालों को क्या मुँह दिखाएँगे? क्या जवाब देंगे? समाज के लोग क्या कहेंगे?

माता-पिता के हृदय में एक बात की तसल्ली थी कि हमारी बच्ची कोई गलत रास्ते नहीं गई है, जा ही नहीं सकती। उसका स्वभाव, उसके संस्कार वे अच्छी तरह जानते थे। कर्मावती भगवान की भक्त थी। कोई गलत मार्ग लेने का सोच ही नहीं सकती।

आजकल तो कई लड़कियाँ अपने यार-दोस्त (Lover) के साथ पलायन हो जाती हैं। कर्मावती ऐसी पापिनी नहीं थी।

परशुराम सोचते हैं कि बेटी परमात्मा के लिए ही भागी होगी, फिर भी क्या करूँ? इज्जत का सवाल है। राजपुरोहित के खानदान में ऐसा हो? क्या किया जाय? आखिर उन्होंने अपने मालिक शेखावत सरदार की शरण ली। दुःखी स्वर में कहा :

**जंगल-झाड़ियों में, मठ-मंदिरों में, पहाड़-कंदराओं में, गुरुकुल-आश्रमों में, सब जगह तलाश करो। कहीं से भी कर्मावती को खोजकर लाओ। जो कर्मावती को खोजकर ले आएगा, उसे दस हजार मुद्राएँ इनाम में दी जाएँगी।**

"मेरी जवान बेटी भगवान की खोज में रातोरात कहीं चल पड़ी है। आप मेरी सहायता करें। मेरी इज्जत का सवाल है।"

सरदार परशुराम के स्वभाव से सुपरिचित थे। उन्होंने अपने घुड़सवार सिपाहियों को चहुँ ओर कर्मावती की खोज में दौड़ाये। घोषणा कर दी कि जंगल-झाड़ियों में, मठ-मंदिरों में, पहाड़-कंदराओं में, गुरुकुल-आश्रमों में, सब जगह तलाश करो। कहीं से भी कर्मावती को खोजकर लाओ। जो कर्मावती को खोजकर ले आएगा, उसे दस हजार मुद्राएँ इनाम में दी जाएँगी।

घुड़सवार चारों दिशा में भागे। जिस दिशा में कर्मावती भागी थी, उस दिशा में भी घुड़सवार की एक टुकड़ी चल पड़ी।

सूर्योदय हो रहा था। धरती पर से रात्रि ने अपना काला आँचल उठा लिया था। कर्मावती भागी जा रही थी। प्रभात के प्रकाश में थोड़ी चिन्तित भी हुई कि कोई खोजने आयेगा तो आसानी से दिख जाऊँगी, पकड़ी जाऊँगी। वह वीरांगना भागी जा रही है और बार-बार पीछे मुड़कर देखे जा रही है।

दूर-दूर देखा तो पीछे रास्ते में धूल उड़ रही थी। कुछ ही देर में घुड़सवार की टुकड़ी आती हुई दिखाई दी। वह सोच रही है :

"अब? जरूर ये लोग मुझे पकड़ने आ रहे हैं। सिपाहियों के आगे मुझ निर्बल बालिका का क्या चलेगा? हे भगवान! अब क्या करूँ? चहुँ ओर उजाला छा गया है। अब तो घोड़ों की आवाज भी सुनाई पड़ रही है। कुछ ही देर में वे लोग आ जाएंगे। सोचने का भी समय अब नहीं रहा।"
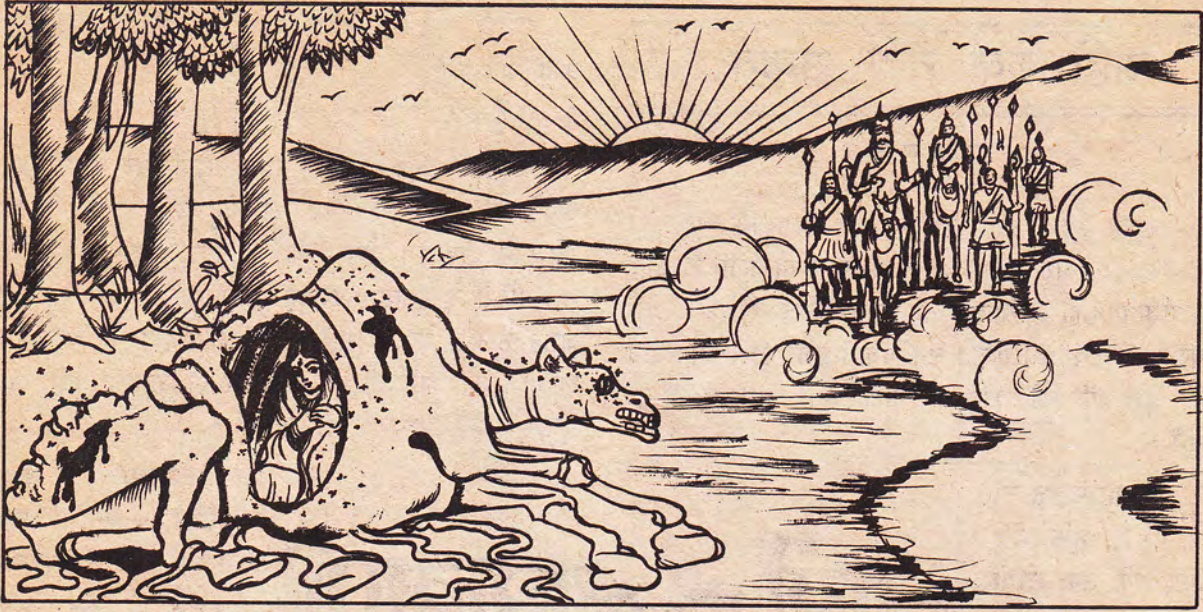
कर्मावती ने देखा : रास्ते के किनारे एक ऊँट मरा हुआ पड़ा था। अगले दिन ही मरा था और रात को सियारों ने उसके पेट का माँस खाकर पेट की जगह पर पोल बना दिया था। कर्मावती के चित्त में चमक पैदा हुई। उसने क्षण भर में सोच लिया कि इस मरे हुए ऊँट के खाली पेट में छुप जाऊँ तो उन कातिलों से बच सकती हूँ। वह मरे हुए, सड़े हुए, बदबू मारनेवाले ऊँट के पेट में घुस गई।

घुड़सवार की टुकड़ी रास्ते के इर्दगिर्द पेड़-झाड़ी-झाँखर, छिपने जैसे सब स्थानों की तलाश करती हुई वहाँ आ पहुँची। सिपाही मरे हुए ऊँट के पास आये तो भयंकर दुर्गन्ध। वे अपना नाक-मुँह सिकोड़ते, बदबू से बचने के लिए आगे बढ़ गये। वहाँ तलाश करने जैसा था भी क्या?

कर्मावती ऐसी सिर चकरा देनेवाली बदबू के बीच छुपी थी। उसका विवेक बोल रहा था कि, 'संसार के विकारों की बदबू से तो यह मरे हुए ऊँट की बदबू अच्छी है। संसार के काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर की जीवन पर्यन्त की गन्दगी से तो यह दो दिन की गन्दगी अच्छी है। संसार की गन्दगी तो हजारों जन्मों की गन्दगी में ग्रस्त करेगी, हजारों-लाखों बार बदबूवाले अंगों से गुजरना पड़ेगा, कैसी-कैसी योनियों में जन्म लेना पड़ेगा! मैं वहाँ से अपनी इच्छा के मुताबिक बाहर नहीं निकल सकती। ऊँट के शरीर से मैं अपनी इच्छा से कम-से-कम बाहर तो निकल जाऊँगी।'

कर्मावती को मरे हुए सड़े ऊँट के पेट की पोल में वह बदबू नहीं दिखाई दी जो संसार के विकारों में होती। कितनी बुद्धिमान रही होगी वह बेटी!

कर्मावती पकड़े जाने के डर के मारे उसी पोल में पड़ी रही... एक दिन... दो दिन...तीन दिन तक। जल्दबाजी करने से शायद मुसीबत आ जाय! घुड़सवार खूब दूर-दूर तक चक्कर लगाते, दौड़ते, हाँफ्ते, निराश होकर वापस लौटे। उसी रास्ते से गुजर रहे थे। आपस में बातचीत कर रहे थे कि : "भाई! वह तो मर गई होगी। किसी कुँए या तालाब में गिर गई होगी। अब हाथ लगना मुश्किल है।" पोल में पड़ी कर्मावती ये बातें सुन रही है।

सिपाही दूर दूर चले गये। कर्मावती को पता चला फिर भी दो-चार घण्टे और पड़ी रही। शाम ढली, रात्रि हुई, चहुँ ओर अंधेरा छा गया। जब जंगल में सियार बोलने लगे, तब कर्मावती बाहर निकली। उसने इधर-उधर देख लिया। कोई नहीं था। भगवान को धन्यवाद दिया। फिर भागना शुरू किया। भयावह जंगलों से गुजरती, हिंसक प्राणियों की डरावनी आवाजें सुनती कर्मावती आगे बढ़ी जा रही है। उस वीर बालिका को जितना संसार

का भय था, उतना क्रूर प्राणियों का भय नहीं था। वह समझती थी कि, 'मैं भगवान की हूँ और भगवान मेरे हैं। जो हिंसक प्राणी हैं वे भी तो भगवान के ही हैं। उनमें भी मेरा परमात्मा है। वह परमात्मा प्राणियों को मुझे खा जाने की प्रेरणा थोड़े ही देगा! मुझे छिप जाने के लिए जिस परमात्मा ने मरे हुए ऊँट की पोल दी, सिपाहियों का रूख बदल दिया वह परमात्मा आगे भी मेरा रक्षण करेगा। नहीं तो यह कहाँ रास्ते के किनारे ही ऊँट का मरना, सियारों का माँस खाना, पोल बनना, मेरे लिए घर बन जाना? घर में घर जिसने बना दिया वह परम कृपालु परमात्मा मेरा पालक और रक्षक है।'

**कर्मावती के चित्त में चमक पैदा हुई। उसने क्षण भर में सोच लिया कि इस मरे हुए ऊँट के खाली पेट में छुप जाऊँ तो उन कातिलों से बच सकती हूँ। वह मरे हुए, सड़े हुए, बदबू मारनेवाले ऊँट के पेट में घुस गई।**

ऐसा दृढ़ निश्चय कर कर्मावती भागी जा रही है। चार दिन की भूखी-प्यासी वह सुकुमार बालिका भूख-प्यास को भूलकर अपने गन्तव्य स्थान की तरफ दौड़ रही है। कभी कहीं झरना मिल जाता, तो पानी पी लेती। कोई जंगली फल मीले तो खा लेती, कभी कभी पेड़ के पत्ते भी चबाकर क्षुधा-निवृत्ति का एहसास कर लेती।

आखिर वह परम भक्त वृन्दावन पहुँची। सोचा कि इसी वेश में रहूँगी तो मेरे इलाके के लोग पहचान लेंगे। घरवाले भी खोजते-खोजते आ जाएँगे, पकड़ लेंगे, समझाएँगे, आग्रह करेंगे। नहीं मानूँगी तो जबरन पकड़कर ले जाएँगे। इससे अपने को छुपाना अति आवश्यक है।

**कर्मावती को मरे हुए सड़े ऊँट के पेट की पोल में वह बदबू नहीं दिखाई दी जो संसार के विकारों में होती। कितनी बुद्धिमान रही होगी वह बेटी!**

कर्मावती ने वेश बदल दिया। सादा फकीर-वेश धारण कर लिया। एक सादा श्वेत वस्त्र, गले में तुलसी की माला, ललाट पर तिलक। वृन्दावन में रहनेवाली और भक्तिनों जैसी भक्तिन बन गई।

कर्मावती के कुटुम्बीजन वृन्दावन आये। सर्वत्र खोज की। कोई पता नहीं चला। बाँके बिहारी के मंदिर में रहे, सुबह-शाम छुपकर तलाश की लेकिन उन दिनों में कर्मावती मंदिर में क्यों जाय? बुद्धिमान थी वह।

वृन्दावन में ब्रह्मकुण्ड के पास एक साधु रहते थे। जहाँ भूले भटके लोग ही जाते वह ऐसी जगह थी। वहाँ कर्मावती पड़ी रही। वह अधिक समय ध्यानमग्न रहा करती। भूख लगती तब वह बाहर जाकर हाथ फैला देती। भगवान की प्यारी बेटी भिखारिन के वेश में टुकड़ा खा लेती।

जयपुर से भाई आया, अन्य कुटुम्बीजन आये। वृन्दावन में सब जगह खोज-बीन की। निराश होकर सब लौट गये। आखिर पिता राजपुरोहित परशुराम स्वयं आये। उन्हें हृदय में पूरा यकीन था कि मेरी कृष्णप्रिया बेटी श्रीकृष्ण के धाम के अलावा और कहीं नहीं जा सकती। सुसंस्कारी, भगवद्भक्ति में लीन अपनी सुकोमल प्यारी बच्ची के लिये पिता का हृदय बहुत व्यथित था। बेटी की मंगल भावनाओं को कुछ-कुछ समझनेवाले परशुराम का जीवन निस्सार-सा हो गया था। उन्होंने कैसे भी करके कर्मावती को खोजने का दृढ़ संकल्प कर लिया। मार्ग के पासवाले पेड़ों पर चढ़कर छिप जाते, आते-जाते लोगों की चुपके से निगरानी रखते, कभी किसी पेड़ पर तो कभी किसी पेड़ पर, सुबह से शाम तक रास्ते से गुजरते लोगों को ध्यानपूर्वक निहारते! किसी वेश में छिपी हुई अपनी लाडली का मुख दिख जाय!

(क्रमशः)

*

## प्रतिभावान बालक रमण

महाराष्ट्र में एक लड़का था । उसकी माँ बड़ी कुशल थी, सत्संगी थी । बच्चे को थोड़ा बहुत ध्यान सिखाती थी । लड़का १४-१५ साल का हुआ तब उसकी बुद्धि विलक्षण बन गई । आगे चलकर बड़ा प्रसिद्ध न्यायाधीश बना । उसका नाम था मरीआडा रमण ।

चार डकैत थे । कहीं डाका डाला तो हीरे-जवाहरात का बक्सा मिल गया । उसे सुरक्षित रखने के लिये चारों पहुँचे एक खानदान बुढ़िया के पास । बक्सा देते हुए बोले :

"माताजी ! हम चार दोस्त व्यापार-धन्धा करने निकले हैं । हमारे पास कुछ पूंजी है । यहाँ कोई जान-पहचान है नहीं । इस जोखिम को कहाँ साथ लेकर घूमें ? आप इसे रखो और जब हम चारों मिलकर एक साथ लेने के लिए आवें तब लौटा देना ।"

बुढ़िया ने कहा : "ठीक है ।"

बक्सा देकर चारों रवाना हुए । आगे गये तो एक चरवाहा दूध लेकर बेचने जा रहा था । इन लोगों को दूध पीने की इच्छा हुई । पास में बर्तन था नहीं । तीन डकैतों ने अपने चौथे साथी को कहा कि, "जाओ, दूर वह बुढ़िया का घर दिखाई दे रहा है वहाँसे बर्तन ले आओ । हम लोग यहाँ इन्तजार करते हैं ।"

डकैत चला बर्तन लेने । रास्ते में उसकी नीयत बिगड़ी । बुढ़िया के पास आकर बोला : "माताजी ! हम लोगों ने विचार बदला है । यहाँ रुकेंगे नहीं । आज ही दूसरे नगर में चले जाएंगे । अत: हमारा बक्सा लौटा दो । मेरे तीन दोस्त वहाँ खड़े हैं सामने । मुझे बक्सा लेने भेजा है ।"

बुढ़िया को जरा सन्देह हुआ । बाहर आकर उसके साथियों की तरफ देखा तो तीनों खड़े हैं । बुढ़िया ने बात पक्की करने के लिए उनको इशारे से पूछा : "इसको दे दूँ ?"

डकैतों को लगा : माई पूछ रही है कि इसको बर्तन दूँ । तीनों ने दूर से ही कह दिया : "हाँ हाँ उसको दे दो ।"

बुढ़िया घर में गई । पिटारे से बक्सा निकालकर दे दिया । वह चौथा डकैत दूसरे रास्ते से पलायन हो गया ।

तीनों साथी काफी इन्तजार करने के बाद बुढ़िया के पास पहुँचे । उन्हें पता चला कि चौथा साथी बक्सा ले भगा है । अब तो वे बुढ़िया पर ही बिगड़े : "तुमने एक आदमी को बक्सा दिया ही क्यों ? चारों को साथ में देने की शर्त थी ।"

झगड़ा हो गया । बात पहुँची राजदरबार में । डकैतों ने पूरी हकीकत राजा को बतायी । राजा ने माई से पूछा :

"क्योंजी ! इन लोगों ने बक्सा दिया था ?"

"जी महाराज !"

"ऐसा कहा था कि जब चारों मिलकर आवें तब लौटाना ?"

"जी महाराज ।"

## शैशव और साधना

"तुमने एक ही आदमी को बक्सा दे दिया । अब इन तीनों को भी अपना अपना हिस्सा मिलना चाहिए । अपनी माल-मिल्कियत, जमीन-जायदाद, गाय-भैंस जो कुछ हो वह बेचकर इन लोगों का हिस्सा चुकाना पड़ेगा । यह हमारा फरमान है ।" राजा ने आदेश दे दिया ।

बुढ़िया रोने लगी । विधवा थी । घर में छोटे बच्चे थे । कमानेवाला कोई था नहीं । संपत्ति नीलाम हो जायेगी तो गुजारा कैसे होगा ? अपने भाग्य को रोती-पीटती रास्ते से गुजर रही थी । १५ साल के रमण ने उसे देखा तो पूछने लगा :

"माताजी ! क्या हुआ ? क्यों रो रही हो ?"

बुढ़िया ने सारा किस्सा कह सुनाया । आखिर में बोली :

"क्या करूँ बेटे ? मेरा तकदीर ही ऐसा फूटा है, वरना मैं उनका बक्सा लेती ही क्यों ?"

रमण ने कहा : "माताजी ! आपके तकदीर का कसूर

नहीं है, राजा की खोपड़ी का कसूर है ।"

संयोगवश राजा गुप्तवेश में वहीं से गुजर रहा था उसने सुन लिया । पास आकर पूछा :

"क्या बात है ?"

"बात यह है कि नगर का राजा है, यद्यपि मैं उन्हें नहीं जानता हूँ, उन्हें न्याय करना नहीं आता । इस माताजी के मामले में गलत चुकादा दिया है ।" रमण निर्भयता से बोल गया ।

**प्रतिभा विकसित करने की कूँजी सीख लो । जरा-सी बात में खिन्न न होना । मन को स्वस्थ, शान्त रखना । संयम और सदाचार बढ़ायें ऐसे पुस्तक पढ़ना । परमात्मा का ध्यान करना । सत्पुरुषों का सत्संग करना ।**

"अगर तू न्यायाधीश होता तो कैसा न्याय देता ?" राजा को किशोर रमण की बात में उत्सुकता बढ़ रही थी ।

रमण बोला : "राजा को न्याय करवाने की गरज होगी तो मुझे दरबार में बुलाएंगे । फिर मैं न्याय दूँगा ।"

दूसरे दिन राजा ने रमण को बुलाया । पूरी सभा लोगों से खचाखच भरी थी । वह बुढ़िया माई और तीन दोस्त भी बुलाये गये थे । राजा ने पूरा मामला रमण को सौंपा ।

रमण ने बुजुर्ग न्यायाधीश की अदा से मुकदमा चलाते हुए पहले बुढ़िया से पूछा :

"क्यों माताजी ? चार सज्जनों ने आपको बक्सा सँभालने के लिए दिया था ?"

"हाँ ।"

"चारों सज्जन मिलकर एक साथ बक्सा लेने आवे तो बक्सा लौटाने के लिए कबूलात की थी ?"

"हाँ ।"

रमण अब तीनों डकैतों की ओर मुड़कर बोला : "अरे, अब तो कोई झगड़े की बात ही नहीं है । सद्गृहस्थों ! आपने ऐसा ही कहा था न कि हम चार मिलकर आवें तब हमें बक्सा लौटा देना ?"

"हाँ, ठीक बात है । ऐसा ही हमने इस माई से तय किया था ।"

"यह माताजी तो अभी भी आपको आपका बक्सा लौटाने को तैयार है मगर आप ही अपनी शर्त को भंग कर रहे हो ।"

"कैसे ?"

"आप चार साथी मिलकर आओ । अभी आपको आपकी अमानत दिलवा देता हूँ । आप तो तीन ही हैं । चौथा कहाँ है ?"

"साहब ! वह तो... वह तो... "

"उसे बुलाकर लाओ । जब चार साथ में आओगे तभी आपका बक्सा मिलेगा । नाहक में इन बेचारी माताजी को परेशान कर रहे हो ?"

तीनों डकैत पोपला मुँह लिये रवाना हो गये । सारी सभा दंग रह गई । सच्चा न्याय तोलनेवाले प्रतिभा-संपन्न बालक की युक्तियुक्त चतुराई देखकर राजा भी बड़ा प्रभावित हो गया ।

प्रतिभा विकसित करने की कूँजी सीख लो । जरा-सी बात में खिन्न न होना । मन को स्वस्थ, शान्त रखना । संयम और सदाचार बढ़ायें ऐसे पुस्तक पढ़ना । परमात्मा का ध्यान करना । सत्पुरुषों का सत्संग करना ।

*

**अपने मन को मजबूत बना लो तो तुम पूर्णरूपेण मजबूत हो। हिम्मत, दृढ़ संकल्प और प्रबल पुरुषार्थ से ऐसा कोई ध्येय नहीं है जो सिद्ध न हो सके।**

**'जो भाग्य में होगा वही मिलेगा' ऐसा जो कहता है वह मूर्ख है। 'भाग्य' शब्द मूर्खों का प्रचार किया हुआ है। पुरुषार्थ ही का नाम भाग्य है**

## आश्रम में आने से 'बायपास सर्जरी' में से मुक्ति

मुझे सन १९८४ से हाई बी. पी. की बिमारी हो गई थी। सुरत सिविल हॉस्पीटल के डाक्टरों ने कार्डियोग्राम देखकर कहा था कि तुम 'एन्जोग्राफी' कराओ। तुम्हें 'बायपास सर्जरी' करानी होगी।

१९८७ में मुझे चालू स्कुटर पर एटेक आया और तात्कालिक निदान के लिए सुरत की अशक्ताश्रम अस्पताल में १५ दिन रहा। घर आने के बाद दो दिन पश्चात्

पुन: पीड़ा और चक्कर शुरू होते ही सुरत के न्यु सिविल होस्पीटल में दो मास तक इलाज करवाया। 'इको कार्डियोग्राफी' करवाई। ऑपरेशन कराने का निर्देश मिला।

ता. ६-२-९० के दिन हृदयरोग का गंभीर हमला हुआ। मुझे बेभान अवस्था में सुरत के महावीर अस्पताल में दाखिल किया गया। मुझे होश में लाकर तात्कालिक बम्बई अस्पताल में दाखिल हो जाने के लिए जताया। बम्बई में एन्जोग्राफी कराकर बायपास सर्जरी करानी होगी, ऐसा डॉक्टरों ने बताया था। डॉक्टरों की रिपोर्ट थी कि हृदय को रक्त देने वाली दो मुख्य नसें 100 % बंद हैं। दूसरी एक 70 % तथा एक 50 % बंद है। अगर जीवित रहना हो तो सप्ताह में ही बायपास सर्जरी करा लो।

उस समय पूज्य गुरुदेव सुरत के आश्रम में बिराजमान थे। मेरी पत्नी मुझे वहाँ ले गई। मुझे दो तीन व्यक्ति पकड़ कर रिक्षा में से पूज्य बापू के समक्ष लाये। मेरी पत्नी हंसा ने रोते रोते विगत बताकर कहा कि बायपास सर्जरी कराना यह हमारी शक्ति से बाहर की बात है। गुरुदेव ने मुझसे सभी बातें पूछ कर प्रभु स्मरण करने तथा गुरुगीता एवं योगयात्रा पुस्तकों को पढ़ने की आज्ञा की। मेरे लिए तो यह प्रत्यक्ष आशीर्वाद था। पूज्य बापू ने कहा : "तुम्हें बायपास सर्जरी नहीं करानी होगी। सुबह एक कली का लहसुन और तुलसी के पाँच पत्ते खाओ।"

इतना कहने के साथ क्या शक्ति दी, इसका वर्णन मैं किस तरह करूँ ? 'नजरों से वे निहाल हो जाते हैं जो नजरों में आ जाते हैं।' पूज्य बापू की दृष्टि अमृतवर्षा है। मेरे मृत्यु की ओर तीव्र गति से धँसने वाले शरीर को उस दृष्टि ने जीवनदान दिया हैं।

अब तो मुझे बहुत ही अच्छा है। डॉक्टरों की रिपोर्ट नोर्मल है। हम दोनों पति-पत्नी ने पूज्य बापू से मंत्र दीक्षा लेकर जीवन को धन्य बनाया है। मेरी पत्नी ने सवा मन शक्कर एवं २१ श्रीफलों की बाधा पूर्ण की। हम नित्य रविवार को वट बादशाह की प्रदक्षिणा करते हैं। यदि पूज्य बापू की शरण न मिली होती तो आज मैं इस दुनिया में न होता और मेरा परिवार भी अपार दु:ख में घसीटा गया होता। मुझ पर गुरुदेव की असीम कृपा है। हमारे जीवनदाता को हमारे लाख लाख प्रणाम।

**— मणीशंकरजी पाठक**

सेलटेक्स ऑफिसर, अहमदाबाद।

## सेवा-एकता-समर्पण-इष्टनिष्ठा विषयक आश्चर्यचकित करे ऐसा चमत्कार...

कड़ोली गाँव (तहसिल हिम्मतनगर, जिला साबरकांठा, गुजरात) के भाविक भक्तों द्वारा वर्णित आश्चर्य

जताये ऐसी बात उनके ही शब्दों में :

"हमारे गाँव का अहोभाग्य है कि परम पूज्य आसारामजी बापू का दिव्य सत्संग समारोह ता : ५ से ८ दिसम्बर १९९१ दरमियान हमारे गाँव कड़ोली में आयोजित किया गया। गाँव के स्वयंसेवक, नेता लोग, कार्यकर्त्ता छोटे-बड़े सभी इस मंगल पुण्यकार्य में आन्तरिक भाव से जुड़ गये थे। इस सत्संग समारोह के समय ऐसा एक भी काम न था जिसमें सभी का सहयोग न हो। छोटे या बड़े सभी कामों में सभी साथ में मिलकर हिस्सा बँटाते। पूज्य बापू ने हमारे गाँव में जिस सत्संग की अमृतवर्षा की वह तो सचमुच अद्भुत ही है। प्रत्येक गाँव से भक्तों के समूह पूज्य बापू की अमृतवाणी श्रवण करने उमड़ पड़ते थे। मंडप छोटा लगता था। जनता बड़ी संख्या में आती थी। हमने चारों दिन डेरी में दूध देना बन्द कर दिया था। समूचा दूध, छाछ आदि दूसरे गाँवों से आनेवाले आगन्तुकों, मेहमानों की सेवा में उपयोग में आता। ता : ८ को शाम के समय जब सत्संग समारोह की पूर्णाहुति हुई तब सत्संग में उपस्थित सबको पड़ियों में प्रसाद बाँटा गया। उसके बाद पूज्य बापू की शोभायात्रा निकली। उसमें भी खूब प्रसाद बाँटा गया। किन्तु अखण्ड भंडार कहाँ कम होने वाला था! बचे हुए प्रसाद से हमने दूसरे दिन हमारे गाँव और पड़ोस के गाँव, छोटी बड़ी दोनों कड़ोली गाँव को भोजन कराया। फिर भी प्रसाद कम नहीं हुआ। तीसरे दिन शाम को हम जीप लेकर प्रसाद वितरण करने निकले। आसपास के पचीस गाँवों में प्रसाद बाँटा फिर भी पूज्य बापू की, परमात्मा की ऐसी कृपा कि प्रसाद कम नहीं हुआ। प्रसाद बाँटने वाले थके किन्तु प्रसाद कम नहीं हुआ। तब हमारा अन्तर भर गया। हम मन ही मन पूज्य बापू से प्रार्थना करने लगे कि, 'बापू ! अब तो बस करो, अब हम बाँट-बाँटकर थक गये हैं।' फिर हम रात को तीन बजे अपने गाँव को वापस आये। पूज्य बापू के फोटो के आगे दीपक, अगरबत्ती करके प्रार्थना की कि बापू ! अब तो यह प्रसाद खत्म करो। ऐसी प्रार्थना की तब ही प्रसाद समाप्त हुआ।

'मेरे-तेरे' की खींचातानी चल रही है ऐसे कलियुग में पूज्य बापू की कृपा तो हमारे लिए गंगोत्री से निकली हुई गंगा से भी अधिक पावन है।"

कड़ोली गाँव के भक्तों ने तीन दिन से दूध डेरी में न देकर ग्राम्यजनों तथा आने-जाने वाले मेहमानों को खुले दिल से देकर स्वागत किया। गाँव की एकता, स्नेह एवं त्याग, अतिथिसेवा और सत्संग में प्रीति अलौकिक थी। कड़ोली गाँव तो था ही किन्तु आसपास के गाँव भी इस पुण्य सरिता में स्नान करने उमड़ पड़े थे। धन्य है इस छोटे से गाँव के नागरिकों को ! कामधंधे तो बन्द किन्तु डेरी में दूध जमा करना भी बंद करके ईश्वर-प्राप्ति के, पुण्य- प्राप्ति के दैवी कार्य में सभी लोग सभी तरह से जुड़ गये थे।

*

## परम पूज्य बापू के स्मरण मात्र से...

मैं केनेड़ा में रहती हूँ। केनेड़ा के डॉक्टरों ने बताया कि मुझे कॅन्सर है और उनकी सलाह के मुताबिक मेरे पुत्र ने इलाज शुरु किया लेकिन मुझे तो मेरे गुरुदेव पूज्य आसारामजी बापू में खूब श्रद्धा थी। मैंने अपने अमरोली (जि. सुरत) स्थित सम्बन्धी के द्वारा सुरत के आश्रम से 'वड दादा' की मिट्टी मँगवाई। मुझे पू. बापु पर बहुत श्रद्धा है इसलिये मैं हररोज पू. बापू के फोटो की पूजा करती हूँ। तुलसी-क्यारे को सात परिक्रमा करके मैं हररोज बड़दादा की मिट्टी मेरे दर्दवाले अंग पर लगाती रही। इससे मेरा कॅन्सर गायब हो गया, मैं बिल्कुल स्वस्थ हो गई और अभी पू. बापू के दर्शनार्थ भारत आ पायी हूँ। पू. बापू के श्रीचरणों में अपनी मनौती अर्पित करते हुए जीवन में धन्यता का अनुभव कर रही हूँ।

— पाली बहन चुनीलाल पटेल

C/o. D.C. Patel

5, Sam Roma Way, 403 Downs view

ONTARIO CANADA.

*

# तीर्थ में पालन करने योग्य नियम

— श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार

बारह वर्ष पर जो महाकुम्भ लगता है, उसकी महिमा अनिर्वचनीय है। तीर्थ अपनी स्वाभाविक शक्ति से सबका पाप नाश करके उन्हें मनोवांछित फल प्रदान करते हैं और मोक्ष भी दे देते हैं। हिन्दूशास्त्रों में तीर्थों के नाम, रूप, लक्षण और महत्त्व का बड़ा विशद वर्णन है। महाभारत, रामायण आदि के साथ ही प्राय: सभी पुराणों में तीर्थों की महिमा गायी गयी है। 'पद्मपुराण' और 'स्कंदपुराण' तो तीर्थ-महिमा से परिपूर्ण हैं। शास्त्रों में बताया गया है कि तीर्थ में स्नान करने से समस्त पाप मिट जाते हैं। तीर्थ में किया हुआ पाप कोटिगुना हो जाता है और तीर्थस्नान के द्वारा भी उसकी निवृत्ति नहीं होती।

**तीर्थ में स्नान करने से समस्त पाप मिट जाते हैं। तीर्थ में किया हुआ पाप कोटिगुना हो जाता है और तीर्थस्नान के द्वारा भी उसकी निवृत्ति नहीं होती।**

तीर्थ में रहते समय कुछ न कुछ विशेष नियमों का पालन अवश्य करना चाहिए। यहाँ कुछ नियम दिये जाते हैं :

अनावश्यक, अनवसर, कटु, असत्य और अहितकर वचन नहीं बोलना चाहिए। किसी भी प्राणी को तन, मन अथवा वचन से कष्ट नहीं देना चाहिए।

यथाशक्ति दीन, दु:खी एवं अंगहीन प्राणियों पर दया करनी चाहिए।

क्रोध मन में भी न आने पावे। आ जाने पर क्रिया में न आने देने का तो दृढ़ निश्चय होना चाहिए।

अपनी सब इन्द्रियाँ वश में रखी जायँ। सपत्नीक पुरुष भी ब्रह्मचर्य का पालन करें।

तेल न लगावें। साबुन का उपयोग न करें। पान न खायें। वनस्पति घी और बाजार की मिठाइयों से बचें। चाम का जूता न पहनें।

सूर्योदय से पहले ही उठें और उठते ही भगवान का स्मरण करें। स्नान कभी न छूटने पावे। यज्ञोपवितधारी हों तो तीन समय संध्या और देवर्षि-पितृतर्पण करें। घंटे दो घंटे का मौन अवश्य रखें।

यथाशक्ति सत्पात्र को दान करें। भगवत्कथा एवं सत्पुरुषों के उपदेश का श्रवण करें।

तीर्थ की सीमा से बाहर न जायें।

शौचादि से निवृत्त होने के लिए दूर जायें अथवा नियत स्थान पर ही करें।

साधु-सेवा करें। ऐसी चेष्टा रखें कि निरन्तर भगवन्नाम का जप और स्मरण होता रहे।

नित्य नियमपूर्वक भगवन्मूर्ति की आराधना करें। 'श्रीमद्भागवत्', 'श्रीमद्भगवद्गीता', 'श्रीरामचरितमानस' आदि पवित्र ग्रंथों में से किसी एक का अथवा सबका कुछ न कुछ स्वाध्याय भी करना चाहिए।

नियमों में बड़ी शक्ति है। ये इन्द्रियों की स्वच्छंद प्रवृत्ति को नष्ट करते हैं। अभिमान घटता है और संयम बढ़ता है। कहीं भी रहकर नियमों के पालन से लाभ ही होता है।

*

# संस्था समाचार

**धामणवा में दिनांक : ४ से ७ जनवरी**

जनवरी महीने की ४ से ७ तारीख तक चार दिन के लिये विसनगर तहसिल (जिला-मेहसाणा) के धामणवा गाँव में पूज्य बापू के सत्संग समारोह का आयोजन हुआ। पचीस सौ की बस्ती वाले इस गाँव में सत्संग समारोह के दरमियान चालीस हजार से भी अधिक भक्त-समुदाय पूज्य बापू की अमृतवाणी का लाभ लेने उमड़ पड़ा था। छोटे से इस गाँव में भी बाहर से आने वाले साधकों, भक्तों के रहने तथा भोजन के लिए संपूर्ण सुव्यवस्था की गई थी। सुबह से ही ट्रेक्टर, जीप तथा मोटरगाड़ियों का ताँता चलता रहा। सभी गाँव से, पूरा मेहसाणा जिला, बनासकाँठा, साबरकाँठा तथा अहमदाबाद जिले के साधक भी उमड़ पड़े थे। प्रात: जगह जगह से सत्संग के दाने चुगने भक्त पंखी उमड़ पड़ते और शाम को सभी अपने अपने घोंसलों में। यह चार दिन का सत्संग समारोह उमंग उत्साह का पर्व बन गया।

पूज्य बापू के निवास के लिए गाँव से दूर एक एकांत कुटिया नई ही बनाई गई। इसका उपयोग इस अलख के ओलिया के निवास के लिए किया गया। अब इस कुटिया ने ध्यान-भजन और साधना- स्थल का रूप ले लिया। अत: इसे आश्रम में परिवर्तित करने के हेतु (स्मृति-स्थल बनाने हेतु) गाँव और आसपास के भक्तजनों ने संकल्प किया है।

**विरमगाम में दिनांक : १० जनवरी**

विरमगाम योग वेदान्त सेवा समिति के मुट्ठी भर भाइयों ने भगवद् संकल्प किया और पूज्य बापू का सत्संग समारोह ता : १० वीं के रोज सुबह ९ से १२ विरमगाम में आयोजित हुआ। समय ९ से १२ तक का किन्तु सत्संग समारोह डेढ़ बजे तक चलता रहा। भक्तजन टस से मस न हुए। भक्तजन एकाग्रचित्त से आत्मिक महासागर से बह कर आने वाली सुरावली को सुनकर अपने को भाग्यशाली महसूस कर रहे थे। मंडप जितना था उसमें समा सकें; उतने बैठे, दूसरे उतने ही भक्त बाहर भरी दुपहरी में खड़े खड़े सत्संग की वर्षा में स्नान करते रहे...। आज विरमगाम में छात्रालय के प्रार्थना हॉल का उद्घाटन पूज्य बापू के वरद हस्तों से हुआ।

**अहमदाबाद में १२ से १५ जनवरी उत्तरायण शिविर**

तारीख १२ से १५ चार दिन तक अहमदाबाद आश्रम में उत्तरायण के पावन पर्व में ध्यान योग शिविर का आयोजन हुआ। देश विदेश में सबको यह समय अवकाश और जलवायु की दृष्टि से अहमदाबाद में अनुकूल रहा। इन दिनों में भारत के किस प्रदेश से लोग नहीं आये; यही पूछना पड़ता। गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान और मध्य प्रदेश से तो ठीक किन्तु हरियाणा, यू. पी. तथा तामिलनाडु से भी भक्तजन यहाँ आ पहुँचे थे। इसके इलावा अमेरिका, योरप, दुबई तथा होंगकोंग से भी भक्तजन इस शिविर में भाग लेने उमड़ पड़े थे। उत्तरायण शिविर याने गुलाबी ठंड़ी, तिलगुड़ के लड्डू और पूज्य बापू के ध्यान, सत्संग और कीर्तनामृत की अविरतवर्षा।

इस प्रसंग में वे आत्माएँ भाग्यशाली हैं जो शिविर के आध्यात्मिक आन्दोलनों से अपने तन को स्वस्थ, मन को प्रसन्न और बुद्धि को पावन प्रसाद में तन्मय होने का सुअवसर प्राप्त कर लेती हैं। चार दिन की शिविर का लाभ लेना याने चौरासी लाख जन्मों के पाप-ताप के संस्कार नष्ट करके आत्मानंद में सराबोर कराने वाला सुवर्ण अवसर प्राप्त करना।

ईश्वरकृपा एवं गुरुकृपा का बहता झरना... इस अवसर का तो जिसने अनुभव किया है; वही जान सकता है। मंसूरी मस्ती को, मीरां की मस्ती को बिचारे लोग क्या समझें?

सचमुच ही, गुरु वसिष्ठजी ने कहा है :

"ज्ञानवान संतों की जिन पर दृष्टि पड़ती है ऐसी पुण्यात्माओं को हमारे प्रणाम !"

५२१५ वर्ष पूर्व वृंदावन में ग्वाल और गोपियाँ बंसीनाद और कृष्णकृपा की वृष्टि में दिव्यामृत का पान करते थे यह सुना है। अब बंसी के स्थान पर शायद 'केशियो' और योगेश्वर कृष्ण के नेत्रों से बरसती योगकृपा; ऐसी प्रतीत होती है कि अभी गुरुकृपा का रूप धारण करके न आई हो !

अनुभव करनेवाला ही जाने... आश्चर्य... आश्चर्य !

**भिवानी ( हरियाणा ) में दिनांक : २० से २३ फरवरी तथा दिल्ली में २७ फरवरी से ३ मार्च**

ता : २० से २३ फरवरी हरियाणा के भिवानी शहर में पूज्य गुरुदेव का सत्संग समारोह तथा ता : २७ फरवरी से ३ मार्च तक भारत की राजधानी दिल्ली में रामवाटिका, अजमल खाँ पार्क, करोलबाग में सत्संग वर्षा। गत डेढ़ वर्ष से इन सत्संग समारोह की तैयारियाँ हो रही थीं। दिल्ली के राजमार्ग, धर्मस्थान, मेले, बाजार सभी स्थानों पर पोस्टर, वाहनों पर स्टीकर, बेनर, बड़े होर्डिंग्स आदि ने दिल्ली को प. पू. आसारामजी बापू के रंग में रंग दिया था। और जब ता : २७ को सत्संग समारोह की शुरूआत हुई तब जो मानव समुदाय, विराट जनमेदनी उमड़ पड़ी थी; यह योग्य ही थी; कारण कि राजधानी के अशान्त, व्यस्त और उपद्रवपूर्ण जीवन में जो ईश्वरीय आनंद, आत्मशांति की झलक न हो तो ईंट, चूना, लोहा और लकड़ी के मकान, फेक्टरियाँ, मील और आधुनिक सुविधाओं से क्या? पकवान और व्यंजनों से मानव को संतोष नहीं होता। मनपसंद भोजन, आवास सुविधाओं से शरीर की भूख सन्तुष्ट होती है, आरामप्रद समय बीतता है किन्तु मनुष्य की अपनी भूख आत्मरस की, ईश्वर प्रेम की है। और जहाँ यह व्यंजन खुले हाथ बाँटी जाती हो वहाँ कौन समझदार मानव न पहुँचे? दिल्लीवासी, भिन्न-भिन्न राज्य के लोग, देश विदेश के प्रवासी भी आत्मानंद के सागर की शीतलता भरी, लहराती मधुरवाणी, जीवन के कूट प्रश्नों का समाधान करानेवाली, अनुभवमूलक, तत्त्वनिष्ठा की अभिव्यक्ति एवं मधुर से भी मधुर सुमधुर, शीघ्र पावन करने वाली वाणी का एवं पापनाशक हरिनाम कीर्तन का रसपान करने के लिए करोलबाग रामवाटिका में उमड़ पड़े थे।

शिवरात्रि महोत्सव भी यहीं पूज्यश्री बापू के सान्निध्य में आयोजित किया गया था। तब पूज्य बापू की आह्लादक वाणी में शिवतत्त्व-रहस्य एवं शिव-मानसपूजा का अभूतपूर्व लाभ भक्तों, साधकों तथा श्रोताओं को मिला था। *

ता : १, २, ३ जनवरी को खेरवाड़ा (जिला उदयपुर) में एक विद्यार्थी शिविर का आयोजन हुआ जिसमें खेरवाड़ा तहसिल और आसपास के आदिवासी विस्तारों में से छात्रों ने भाग लिया। जाहिर जनता के लिए दोपहर ३ से ५ तक सत्संग समारोह का आयोजन भी हुआ। इस प्रसंग पर आदिवासियों को वस्त्रदान भी दिया गया।

तारीख ८ से ११ तक गोधरा में एक सत्संग समारोह का आयोजन हुआ। गोधरा की सामान्य जनता, सबजेल के केदी और शाला कॉलेजों के विद्यार्थियों के लिए सत्संग कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

उपरोक्त दोनों कार्यक्रमों में व्यासपीठ पर आश्रम में साधना करनेवाले साधकों ने जनता जनार्दन की भगवदीय सेवा करने का अवसर लिया था।

तारीख ३१ दिसम्बर से ३ जनवरी तक डीसा शहर में भव्य सत्संग समारोह महिला आश्रम की साध्वियों द्वारा सम्पन्न हुआ। डीसावासी सत्संग सरिता में खूब नहाये। बहनों में आनंद और उत्साह का संचार हुआ।

'नारी तू नारायणी' ऋषि वचन अनुसार नारी की महानता और जागृति के सूत्र कैसे होते हैं; उनके दर्शन कराये। संयम, सदाचार, सात्त्विक तेजस्वी जीवन से ही नारी का उत्थान होता है। क्लबों में नृत्य, पाश्चात्य अंधानुकरण, नारी स्वातंत्र्य की ओट में शराबी, कबाबी जीवन में घसीटी जानेवाली नारियों को सावधान हो जाना चाहिए।

महिला आश्रम की बहनों का जीवन देखकर डीसा तथा आसपास की बहनों में सादा, सात्त्विक तथा साध्वी-जीवन का आकर्षण उत्पन्न हुआ। किन्तु बेचारी बहनें संसारी मायाजाल और बंधनों में बंधी हुई हैं। वे कर्त्तव्य-पालन करती हैं। साध्वी-जीवन की मात्र लालसा ही कर सकती हैं। अपने कुटुम्ब को दिव्य बनाने के उपाय सुनकर दिव्य जीवन व्यतीत करने का प्रयत्न कर सकें, यह भी बहुत है।

अलख के ओलिया संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग का लाभ देश-विदेश के लाखों लोग लेते हैं। बुद्धिशाली युवक-युवतियाँ अपना जीवन साधनामय बना कर समाज में प्रकाश फैलाने का पवित्र कार्य कर रहे हैं। यह देखकर इस आश्रम के प्रति समाज का अहोभाव, आदर दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है; यह स्वाभाविक है।

*

Registered with Registrar of Newspapers for India Under No. 48873/91
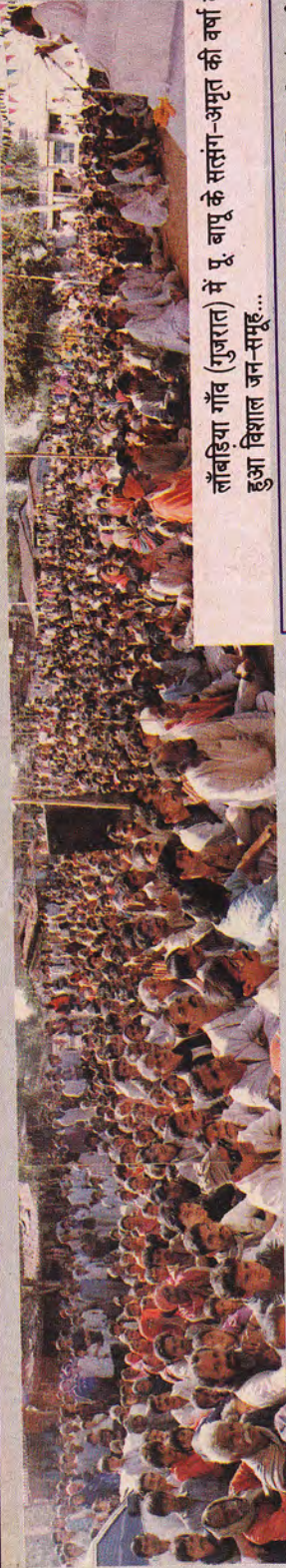
लाँबड़िया गाँव (गुजरात) में पू. बापू के सत्संग-अमृत की वर्षा का लाभ लेता हुआ विशाल जन-समूह...

संत-दर्शन में उत्सुक ग्राम्यजन...

पंचेड़ (नामली, जि. रतलाम) के आश्रम में पूज्यश्री के द्वारा शक्ति-संचार प्राप्त करके सिद्ध बाबा बना हुआ पीपल का वृक्ष... इन सिद्धबाबा के पास हर गुरुवार एवं रविवार के दिन हजारों लोग आकर अपने दुःख-दर्द एवं भूत-प्रेतों के विघ्नों का निवारण करते हैं।

गुरुदर्शन के लिए 'मोक्षद्वार' की ओर आगे बढ़ता हुआ भक्त-समूह... (अहमदाबाद)

गुजरात भर की स्कूलों में आश्रम के साधकों द्वारा योगासनों का प्रायोगिक शिक्षण

विजयादशमी सोसायटी (ओढव, अहमदाबाद) में २६ जनवरी के दिन भव्य संकीर्तन-यात्रा की एक झाँकी...

वापी (जि. वलसाड, गुजरात) में प्रभातफेरी की पूर्णाहुति के प्रसंग पर भावविभोर भक्त-समूह...